तृतीय अध्याय

बिहारी काव्य में चित्रांकन के आयाम

काव्य और चित्र का सम्बन्ध प्राचीन काल से रहा है। चित्र और काव्य दोनों ही अभिव्यक्ति का माध्यम हैं अर्थात् कविता की तरह चित्रकला भी मनुष्य की कोमल भावनाओं का परिणाम है। इनमें अंतर केवल इतना है कि चित्र में अभिव्यक्ति रंगों तथा रेखाओं के माध्यम से होती है और काव्य में कलम तथा शब्दों के माध्यम से। परन्तु, इसका यह अर्थ नहीं है कि काव्य में चित्र और चित्र में काव्य की उपस्थिति नगण्य होती है बल्कि चित्र और काव्य के सम्बन्ध में ऐसे कई प्रमाण हैं, जिनमें चित्रों को देखकर काव्य सृजन भी हुआ है और काव्य के आधार पर चित्रों का निर्माण भी। इस दृष्टि से यदि विचार किया जाये तो काव्य में चित्रों की उपस्थिति के सन्दर्भ में आचार्य शुक्ल की भी सहमति काव्य में अर्थग्रहण ही नहीं, बिम्बग्रहण को भी महत्त्वपूर्ण मानकर हुई है। एक ओर कवि होरेस चित्र को बिना शब्दों की कविता कहकर परोक्ष रूप से काव्य में चित्र की उपस्थिति की और संकेत करते हैं तो वहीं सिमोनीडिज भी चित्र को मूक कविता कहकर कविता को मुखर चित्र कहलाने के पक्ष में हैं। प्रेमचंद के लिए तो कविता की परिभाषा ही तस्वीर खींच देने में है। अब ऐसी स्थिति में इतने विद्वानों के विचारों से प्रभावित हुए बिना भी रह पाना संभव नहीं है। इसलिए अगर सही तरीके से देखा जाये तो चित्रकाव्य अर्थात चित्र में रंगों के माध्यम से कविता भी संभव है और काव्य में शब्दों के माध्यम से चित्र की सृजना भी। इसके लिए जो महत्त्वपूर्ण आवश्यकता कवि में होनी चाहिए वह है 'कल्पना की समाहारशक्ति' के साथ 'भाषा की समासशक्ति'। इसी

'कल्पना की समाहारशक्ति' तथा 'भाषा की समासशक्ति' के सहारे साहित्यकार शब्दों में चित्र बनता है और संगीत का गुंजन भी करता है। यही प्रतिभा कवि बिहारी में भी रही। यही कारण है कि उनके काव्य में भावों, भंगिमाओं, मुद्राओं तथा क्रियाओं का ऐसा वर्णन दोहा शैली में हुआ है कि वह हमारे मानस पटल पर दृश्यमान होकर सजीव हो उठता है, "दोहे जैसे अल्पवर्ण छंद में अनगिनत मानवीय भावनाओं को बाँधकर रखना आसान कार्य नहीं हैं।...सम्पूर्ण प्रसंग को एक चित्र का स्वरुप दे देना बिहारी की अपनी कुशलता है।"[1]

कवि बिहारी के सम्पूर्ण काव्य का बड़ा भाग चित्रों की एक अलबम के रूप में हमारे सामने उभर कर आता है जिसे लगभग सभी आलोचक विद्वानों ने यदा-कदा स्वीकार किया है। इसी सम्बन्ध में डॉ. हरवंशलाल शर्मा का कथन बिहारी के काव्य का प्रमुख गुण चित्रमयता को मानते हुए है, "नायिका की विविध मुद्राओं, चेष्टाओं, व्यापारों और अनुभावों के चित्रण में बिहारी अनुपम हैं। चित्रमयता उनके काव्य का प्रमुख गुण है। पूरी सतसई रमणी की विभिन्न मुद्राओं के अनेक चित्रों का सुंदर अलबम कही जा सकती है।"[2] वहीं गुरुदेव नारायण के लिए, "बिहारी की तूलिका ने तन सौन्दर्य के जो चित्र अंकित किये हैं, वे दोहे जैसे छोटे छंद में भी साकार होकर बोलते हैं।"[3] डॉ. किशोरीलाल तो बिहारी के काव्य को स्पष्ट रूप से पेंटिंग की संज्ञा ही दे देते हैं, "कहने की आवश्यकता नहीं कि बिहारी ने सुदीर्घ साधना और सतत कव्याराधना के बल से शब्द, अर्थ एवं वर्ण में जैसी 'पेंटिंग' की है, वह सब के लिए सहज नहीं।"[4] कवि बिहारी की इस पेंटिंग में स्थिर तथा गतिशील चित्र दोनों ही हैं। आवश्यकता है केवल बिहारी के इन चित्रात्मक संकेतों को समझने की और इन्हें रंग तथा तूलिका के माध्यम से आकार देने की, जो कार्य कुछ उत्तर मध्यकालीन तथा आधुनिक चित्रकारों ने किया भी है। उन्होंने बिहारी के अनेक दोहों से प्रभावित होकर उन्हें अपनी विशेष

कला शैली में चित्रांकित किया है जिसमें विशेषतः मेवाड़, काँगड़ा, बसोहली, गुलेर, और जयपुर शैली में निर्मित बिहारी के चित्र बिहारी की चित्रांकन प्रतिभा को मुखर कर रहे हैं।

इस दृष्टि से देखा जाये तो बिहारी की सतसई का चित्रण दो रूपों में उपलब्ध होता है - प्रथम, जिसमें सम्पूर्ण सतसई के अधिकतम दोहों का चित्रांकन राजाओं, सामंतों तथा कलाप्रेमियों ने कराया, जिसके चित्र उदयपुर तथा जयपुर के संग्रहालयों में भी देखे जा सकते हैं, द्वितीय जिसमें बिहारी के स्फुट दोहों का चित्रण है इसके चित्र काँगड़ा क्षेत्र के संग्रहालयों में सहज ही मिल जायेंगें।

बिहारी के कुछ काव्य चित्र ऐसे भी हैं जिन दोहों में चित्र की संभावनाएँ तो बहुत हैं परन्तु उन दोहों पर अभी तक कोई चित्र हमारी जानकारी में उपलब्ध ही नहीं हो पाया है। ऐसे में इन दोहों में उभारा गया चित्रांकन का वैशिष्ट्य अभी भी उजागर होना बाकी है। इसी आधार पर हमनें बिहारी के सम्पूर्ण काव्य में चित्रांकन के विविध आयामों को समझनें के प्रयास में इनके काव्य-चित्रों को निम्न श्रेणियों में बाँटा है-

1. बिहारी के काव्य पर एक से अधिक शैली में निर्मित हुए चित्र

2. बिहारी के काव्य पर एक शैली में निर्मित हुए चित्र

इनमें एक तरफ बिहारी के कुछ वे दोहे भी हैं जिसमें चित्रांकन का स्पष्ट रूप झलकता है परन्तु जिससे संबंधित चित्र हमें प्राप्त नहीं हो पाये हैं। उनका भी जिक्र इसी श्रृंखला में हमनें चित्रांकन की दृष्टि से किया है।

3.1 : बिहारी के काव्य पर एक से अधिक शैली में निर्मित हुए चित्र

(1)

“अहे, दहेंड़ी जिनि धरै, जिनि तूँ लेहि उतारि।

नीकैं है छींकै छुवै ऐसैं ई रहि, नारि ।।”[5]

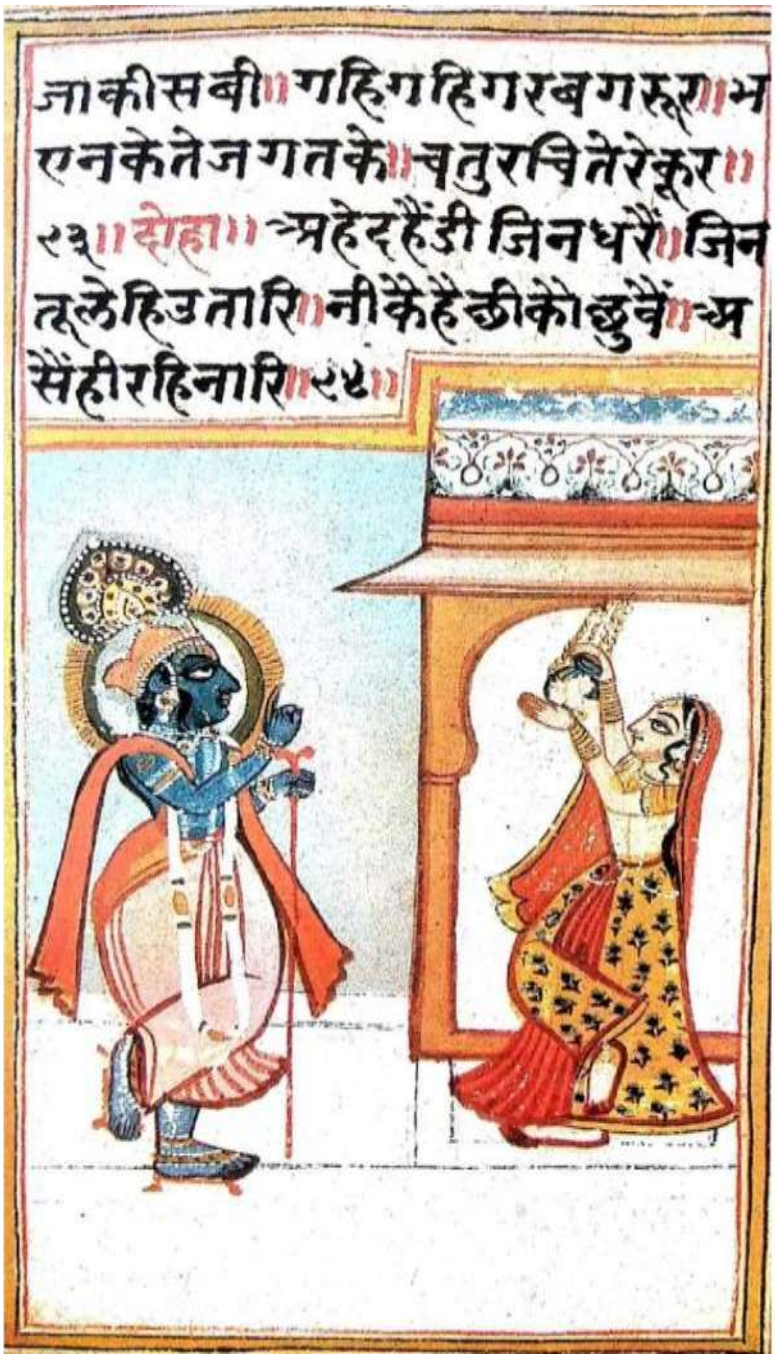

परिशिष्ट : चित्र - 1

अहे, दहेंड़ी जिनि धरै, जिनि तूँ लेहि उतारि।

नीकैं है छींकै छुवै ऐसैं ई रहि , नारि ॥

परिशिष्ट : चित्र - 2

कवि बिहारी ने इस दोहे में नायिका की भंगिमाएँ तथा चेष्टाओं को देख कर नायक के मन में उभरे भावों का वर्णन किया है। नायिका द्वारा छींके पर से दहेंड़ी उतारते और रखते समय जो चेष्टाएँ हुई हैं वह नायक को बहुत प्यारी लग रही है। इसीलिए नायक नायिका को कुछ देर ऐसे ही देखना चाहता है, जिसके लिए वह नायिका से कहता है कि - (भावार्थ) अरी, तू छींके पर कभी दहेंड़ी रखती है और कभी उतार लेती है। तेरी ये चेष्टाएँ इतनी मनमोहक हैं कि तू दहेंड़ी रखना और उतारना करने की बजाय कुछ देर छींके को ऐसे ही छुए रह ताकि तेरा यह मनमोहक रूप मैं कुछ देर ऐसे ही देखता रहूँ।

बिहारी के काव्य का यह दृश्य रूप बसोहली तथा काँगड़ा शैली के एक चित्र में चित्रांकित हुआ है। इन चित्रों में उक्त दोहे से निर्मित शब्द चित्र से प्रेरणा लेकर उसे पूरी भावप्रवणता के साथ रंगों तथा तूलिका के माध्यम से उभारा गया है। काँगड़ा तथा बसोहली इन दोनों शैलियों में ही नायक तथा नायिका के रूप में श्री कृष्ण और राधा को चित्रित किया गया है। इनमें नायिका को छींके से दहेंड़ी को उतारते और रखने के क्रम में दहेंड़ी को छूते हुए खड़े रहने की मुद्रा का अंकन हुआ है, जिसे देखते हुए नायक का चित्रण भी इन चित्रों में हुआ है जो नायिकाओं को इसी अवस्था में देखते और निहारते रहना चाहते हैं। उनके इस भाव के पीछे कारण नायिका की इस अवस्था में कमनीय तथा मनमोहक मुद्रा है जिसका इन दोनों ही शैली के चित्रों में नायक की आँखों में गहन भावों के साथ अंकन हुआ है। काँगड़ा शैली के चित्र में नायिका राधा के छींका छूते समय नायक कृष्ण द्वारा हाथों की विशिष्ट मुद्रा द्वारा जो राधा को ऐसे ही बने रहने का संकेत करते हुए चित्रित किया गया है उसने दोहे के भावों को संजोये इस चित्र को और अधिक आकर्षक और प्रभावशाली बना दिया है। इन चित्रों में राधा की चेष्टाएँ और काँगड़ा शैली में कृष्ण की मुद्राओं के साथ भावप्रवणता और बसोहली शैली के चित्र में कृष्ण के आँखों की भावप्रवणता बड़ी ही रसमयी बन पड़ी है। इन दोनों ही शैली के

चित्रों में विशेष अंतर शैलीगत ही है, जिसमें राधा और कृष्ण के चित्र और आकृतियाँ अपनी-अपनी शैली के अनुसार ही चित्रित हुई है। काँगड़ा शैली के राधा-कृष्ण दोनों ही अधिक सुंदर, मध्यम आकार, पतले तथा कोमलांगी हैं और परम्परागत वस्त्रों को धारण किये हैं। जबकि बसोहली शैली में राधा-कृष्ण का कद थोड़ा छोटा, ढालदार माथा, एक ही प्रवाहदार लम्बी नासिका, कमल के समान नेत्र हैं तथा परम्परागत वस्त्रों को धारण किये हुए भी कृष्ण और राधा का रूप यहाँ काँगड़ा के चित्र की तरह सामान्य स्त्री-पुरुष जैसा न रहकर थोड़ा प्रतापी भगवान कृष्ण और राधा जैसा चित्रित हुआ है। बसोहली शैली के इस चित्र में बिहारी के एक अन्य दोहे का भी अंकन हुआ है परंतु वह इस चित्र के छायांकन से स्पष्ट तौर पर संबंधित तो नहीं है इसी कारणवश हमनें उस दोहे के अनुरूप इस चित्र का वर्णन नहीं किया है। इसे बस चाहें तो दहेंड़ी उतारती हुई नायिका के सौन्दर्य पर लागू कर सकते हैं जैसे ऐसे दहेंड़ी उतारते हुए नायिका का सौन्दर्यांकन करने में सभी बड़े बड़े चित्रकार असहाय हुए जा रहें है। इनमें रंगयोजना का भी भारी अंतर परिलक्षित होता है। बसोहली शैली के चित्र में हमेशा की तरह लाल, पीले और नीले रंग के साथ कुछ गुलाबी रंग को भी प्रयोग में लाकर चित्र को आकर्षक बनाने का प्रयास हुआ है। काँगड़ा शैली के चित्र में चटकीले रंगों से परे शांतिपूर्ण रंगों से चित्र को उभारा गया है जो प्रेम के इस विनोदपूर्ण वातावरण में अधिक प्रभावी बन गया है।

बसोहली शैली के उक्त दोहा आधारित चित्र में पीले स्वर्ण तथा लाल रंग का हाशिये में प्रयोग हुआ है जबकि काँगड़ा शैली के इस चित्र में आलेखन युक्त हाशिये का प्रयोग है। इन दोनों ही चित्रों को देखने पर इनमें दोहे के भावों का ऐसा संयोजन बिहारी की चित्रांकन क्षमता का ही प्रभाव है।

(2)

"बुधि अनुमान , प्रमान श्रुति कियें नीठि ठहराइ।

सूछम कटि पर ब्रह्म की अलख, लखी नहिं जाइ।।"[6]

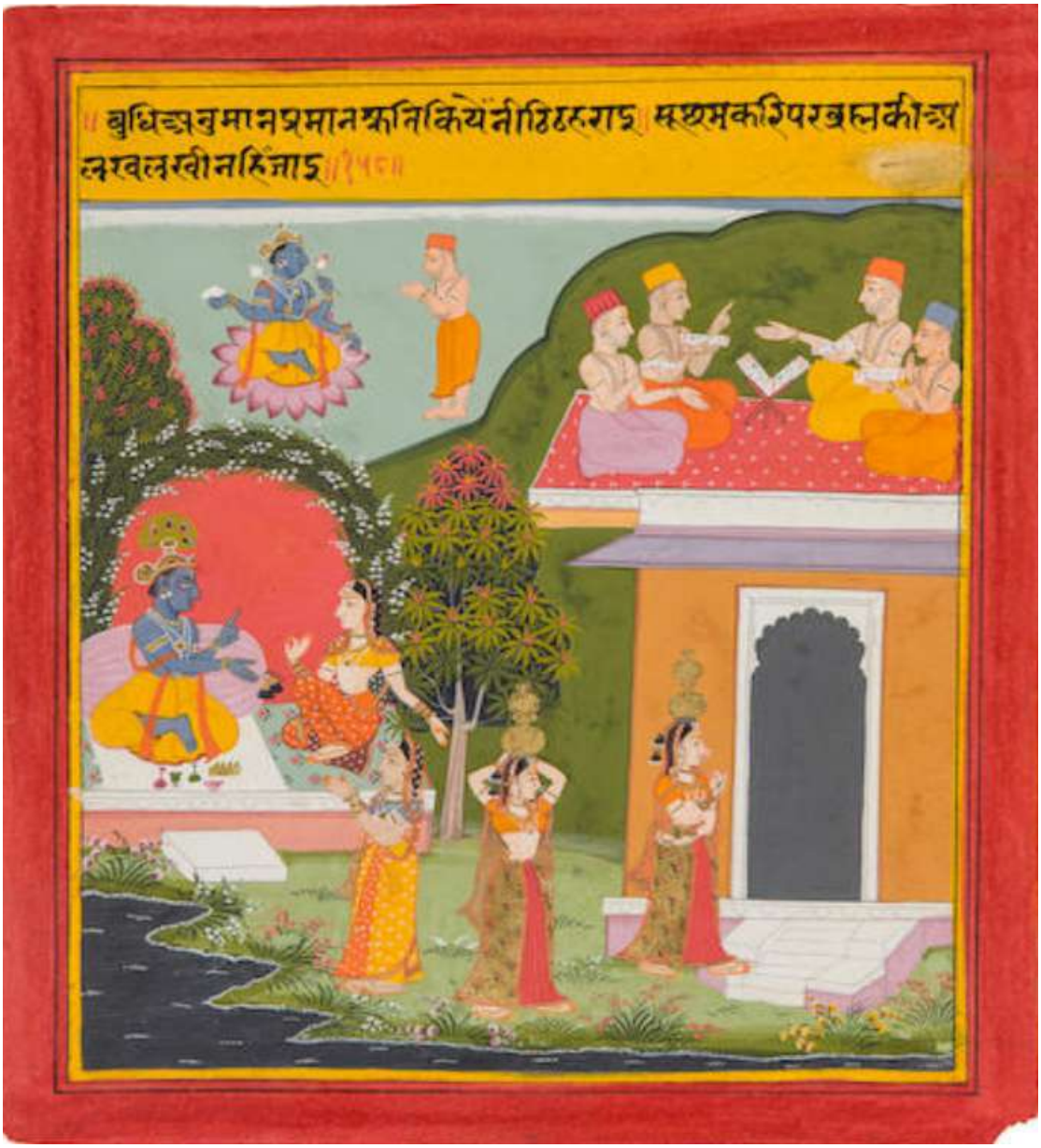

परिशिष्ट : चित्र - 3

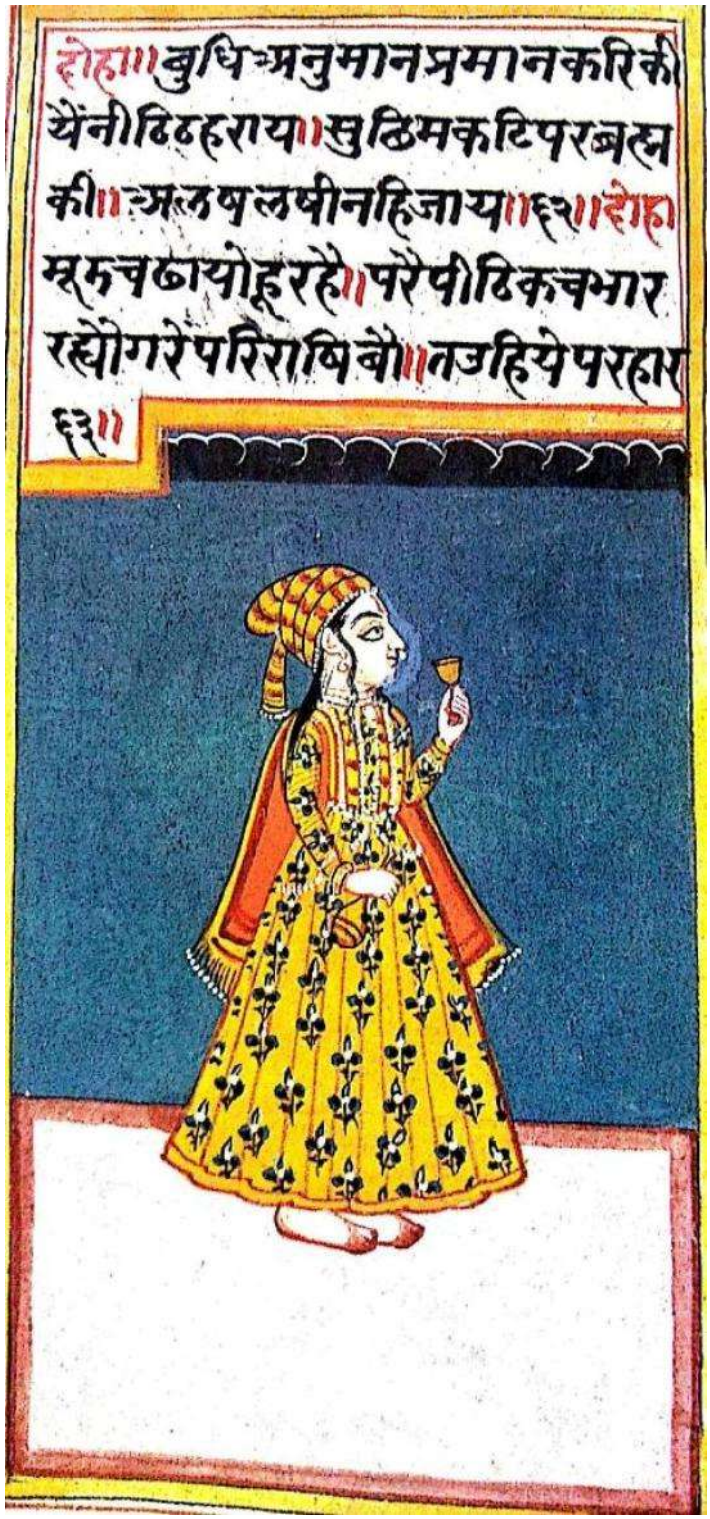
दोहा॥ बुधि अनुमान प्रमान करि की
येंनी ढिढहराय॥ सुठि मकटि पर ब्रह्म
की॥ अलष लषी नहि जाय॥ ६२॥ दोहा॥
मुकुचछायो हू रहे॥ परे पीठि कचभार
रह्यो गरे परि राषि बो॥ नउहिये परहार
६३॥

परिशिष्ट : चित्र - 4

इस दोहे में नायिका की अति सूक्ष्म कटि को ब्रह्मा के समान अलक्षित बताते हुए कवि बिहारी कहते हैं कि- तेरी कटि की सूक्ष्मता ब्रह्मा की तरह चरम दृष्टि से नहीं दिखाई पड़ती। जिस प्रकार बुद्धि द्वारा तर्क करने पर कि ब्रह्मा नहीं हैं तो यह संसार कैसे ठहरा हुआ है और श्रुतियों में जो ब्रह्मा का अस्तित्व बताया गया है उसको प्रमाण मानने पर ही ब्रह्मा की सत्ता स्थापित लगती है। उसी प्रकार, तेरी सूक्ष्म कटि पर विचार करते हुए कि यदि कटि नहीं है तो यह ऊपर तथा नीचे के शरीर का भाग कैसे जुड़ा है? परन्तु, लोगों को कहते हुए सुनने पर कि तेरी भी कटि है उसको मानते हुए ही तेरी कटि का अस्तित्व मेरे भीतर ठहरता है अन्यथा तो तेरी कटि इतनी सूक्ष्म है कि मुझे तो वह नहीं है ही लगती है।

यहाँ बिहारी के इस दोहे में नायिका की सूक्ष्म कटि की अवस्था विचारणीय है जिस अवस्था को बसोहली शैली तथा मेवाड़ शैली के दो चित्रकारों ने बिहारी के उक्त दोहे को आधार लेकर निर्मित किया है। बसोहली शैली में निर्मित चित्र को देखकर इस दोहे का ऐसा कोई अनुमान नहीं लगता क्योंकि इसमें सिर्फ एक राजा या नायक का ही खड़े हुए चिंतन की मुद्रा में हाथ में रस पात्र लिए चित्र खींचा गया है। इसके अलावा इस चित्र में और कुछ ऐसा नहीं है जिससे इस दोहे के भावों का कुछ भी सम्बन्ध हो। इस चित्र में उक्त भाव का बोध चित्र में ही ऊपर की ओर चित्रकार द्वारा काले रंग से लिखा गया बिहारी का यह दोहा है जिससे इस चित्र के मंतव्य का ज्ञान हो पाता है।

मेवाड़ शैली के चित्र में इस पूरे दोहे के भाव को एक ही चित्र में चार दृश्यों के माध्यम से भाव-बोध, विचारणीय मुद्रा तथा प्रश्न की जिज्ञासा को चित्रित किया गया है। इसके एक दृश्य में वेद को बाँचते हुए कुछ विद्वतजनों का चित्र है जो वेद में सूक्ष्म कटि को ब्रह्मा की उपस्थिति के समय से समझने का प्रयास कर रहे हैं। वहीं दूसरे दृश्य में ब्रह्मा और एक विद्वान

को चित्रित किया गया है जिसमें ब्रह्मा के समक्ष हाथ जोड़े खड़ा वह विद्वान इस बात की ओर संकेत करता है कि बहुत प्रयत्न के बाद ब्रह्मा को सूक्ष्म रूप में जानने के प्रयत्न से ही वह लक्षित होते हैं, इसी प्रकार नायिका ये तेरी सूक्ष्म कटि है। इस चित्र के तीसरे दृश्य में राधा रुपी नायिका तथा कृष्ण रुपी नायक साथ बैठे हुए हैं जिसमें नायक राधा की कटि की सूक्ष्मता पर विचारमग्न है। चौथे दृश्य में दो सखियों के साथ जाती हुई राधा का चित्र है जिसके बारे में कृष्ण यह सोच रहे हैं कि यदि कटि नहीं है तो यह ऊपर और नीचे के बीच का भाग जुड़ा कैसे है। इस प्रकार मेवाड़ शैली का यह चित्र पूरे दोहे के भावबोध को सम्पूर्ण तथा सफल रूप में रंगों के माध्यम से संप्रेषित करता है।

इन दोनों चित्रों में रंगयोजना का भी विशेष महत्त्व है। बसोहली शैली के चित्रों में प्रयुक्त रंग अधिक चटकीले हैं, जबकि उन्ही रंगों का मेवाड़ शैली के चित्रों में प्रयोग काम्य बन गया है।

इस प्रकार यह पूरा दोहा जिस भावबोध और मुद्राओं तथा भाव-भंगिमाओं के माध्यम से एक चित्र के चार दृश्यों में अंकन हुआ है वह जितना अधिक प्रशंसनीय है उतना ही बिहारी की चित्रांकन की क्षमता को उनके संकेतों द्वारा समझकर चित्र रूप में चित्रित कर प्रमाणित भी करते हैं।

(3)

"मेरी भव -बाधा हरौ , राधा नागरि सोइ।

जा तन की झाँई परैं स्यामु हरित-दुति होइ।।"[7]

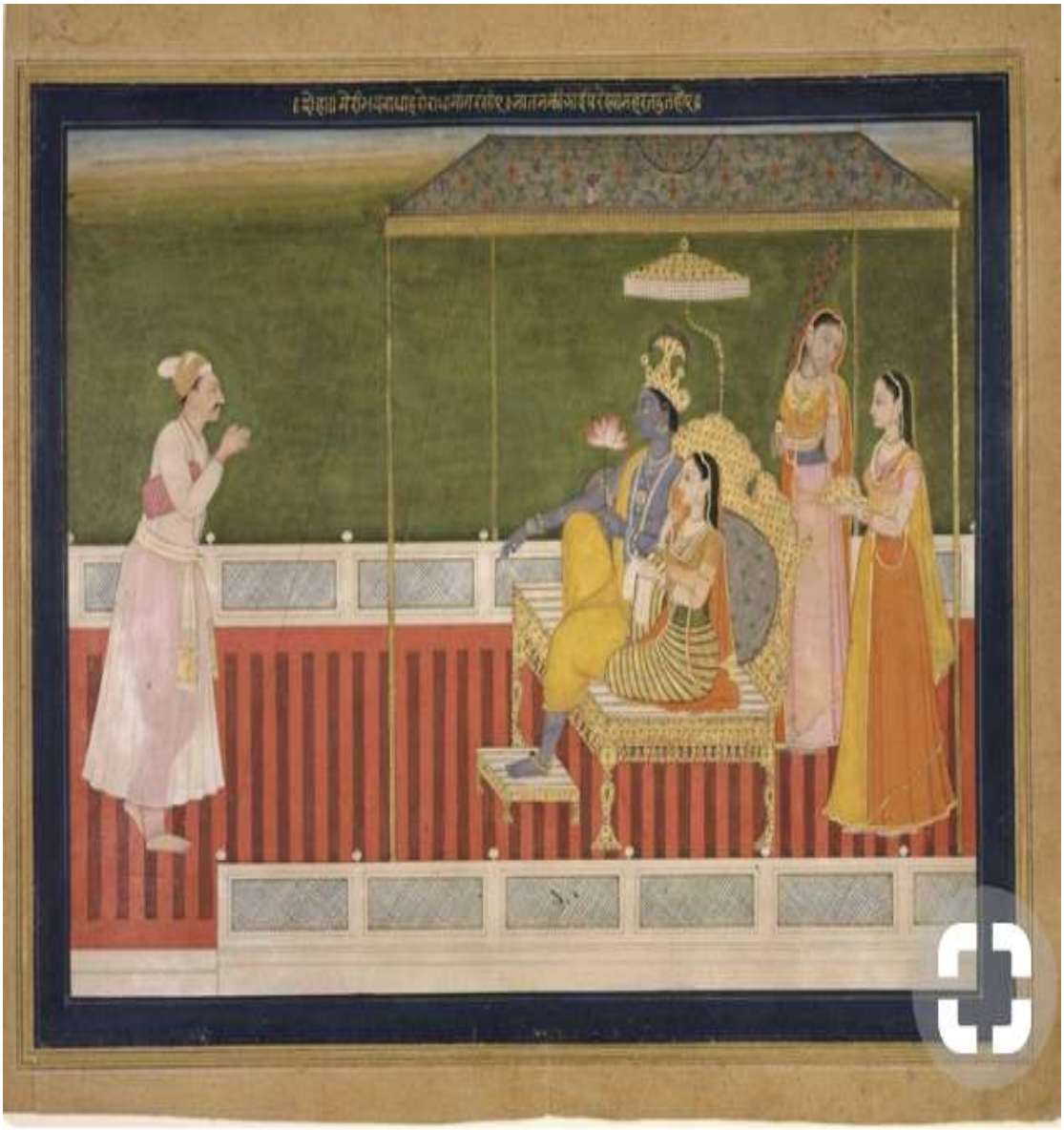

परिशिष्ट : चित्र - 5

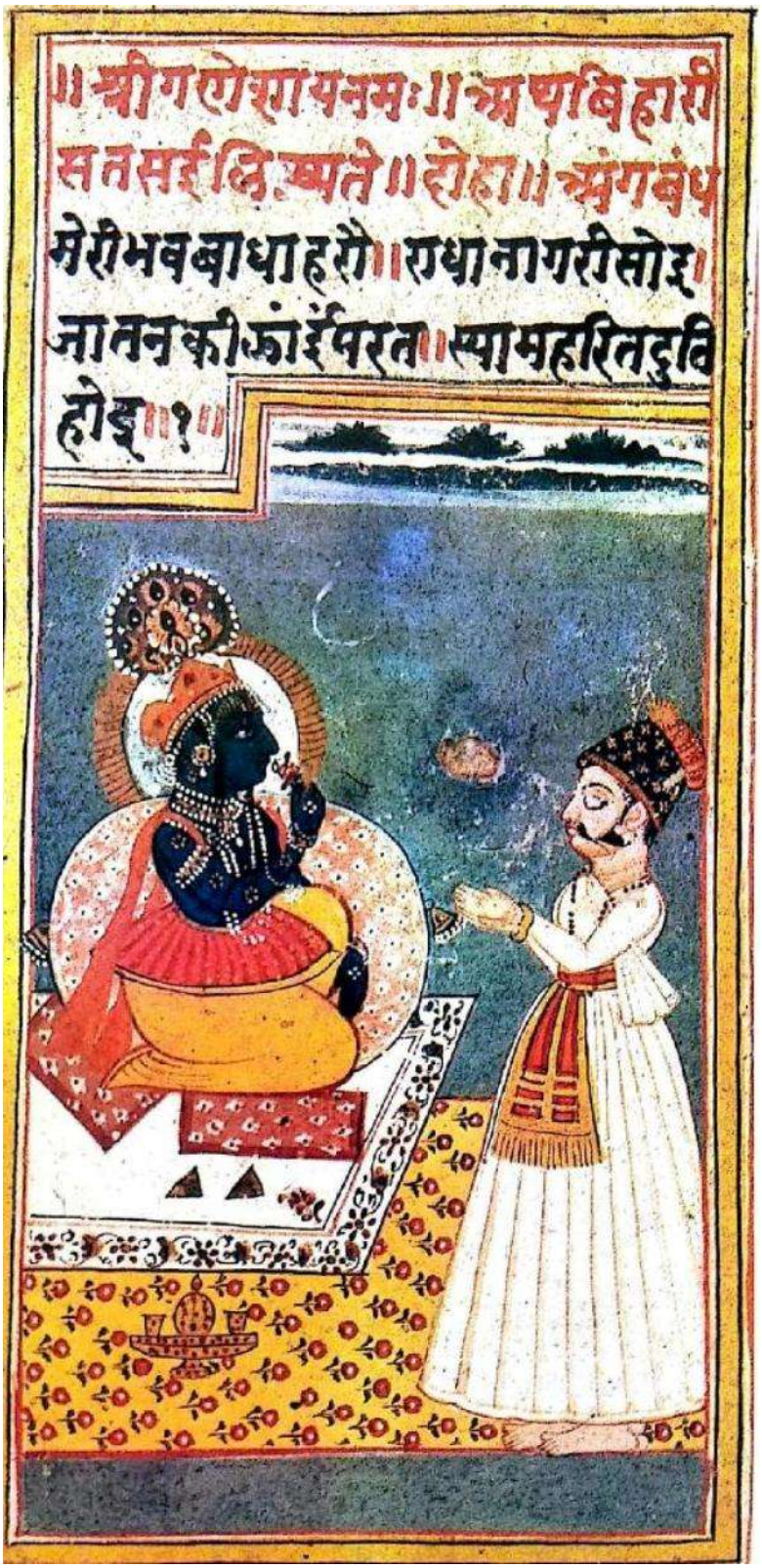
॥श्रीगणेशायनमः॥अथबिहारी
सतसईलिख्यते॥दोहा॥मंगबंध
मेरीभवबाधाहरौ॥राधानागरीसोइ।
जाननकीझांईपरत॥स्यामहरितदुवि
होइ॥१॥

परिशिष्ट : चित्र - 6

बिहारी का यह दोहा प्रार्थनापरक मंगलाचरण है जिसमें सतसई की निर्विघ्न समाप्ति की कामना से सांसारिक बाधाओं को दूर करने की प्रार्थना निहित है। मंगलाचरण के रूप में रचित इस दोहे में श्लेष अलंकार का अधिक प्रयोग हुआ है, जिस कारण इस दोहे के तीन अर्थ निकलते हैं-

पहला अर्थ- हे वही नागरी राधा जिसके तन की झाँई अर्थात परछाँईं पड़ने मात्र से ही श्याम वर्ण वाले श्री कृष्ण हरे रंग की द्युति वाले हो जाते हैं, मेरी भव बाधा को हर लीजिये। इस दोहे में राधा की गुराई की प्रशंसा भी है कि उनके सुनहरे रंग की आभा से श्याम रंग भी हरा हो जाता है।

दूसरा अर्थ- कवि कहता है कि जिनके तन की झलक आँखों में पड़ने से श्रीकृष्ण हरे-भरे अर्थात् प्रसन्नचित हो जाते हैं, हे वही राधा मेरी भव बाधा को दूर कीजिये।

तीसरा अर्थ- हे वही नागरी राधा जिसके तन अर्थात रूप का ध्यान पड़ने से ही भक्त के हृदय में आने वाले श्याम अर्थात काले रंग रूप कल्मष इत्यादि भी कलुषता से रहित हो जाते हैं, सभी दुःख,दरिद्र दूर हो जाते हैं,वही राधा मेरी भव-बाधा का निवारण कीजिये।

मंगलाचरण दोहे में बिहारी की इस प्रर्थनापरक मुद्रा को दो चित्रकारों ने अपने-अपने चित्रों में उतारा है जिसमें एक चित्रकार ने पहाड़ी चित्रकला की बसोहली चित्रशैली तथा एक अन्य कलाकार ने राजस्थान की गुलेर शैली में इन चित्रों का अंकन किया है। इन दोनों ही

चित्रों में कवि बिहारी को घेरदार जामा पहने, पटका बांधे तथा पगड़ी धारण किए हुए कृष्ण के समक्ष हाथ जोड़े हुई मुद्रा में चित्रित किया गया है। इन दोनों ही चित्रों में एक बहुत बड़ा अंतर यह है कि बिहारी के इस मंगलाचरण में राधा को कृष्ण से विनती का माध्यम

बनाया गया है इसलिए दोनों ही चित्रों में राधा की उपस्थिति आवश्यक है, परन्तु, गुलेर शैली के चित्र में तो कृष्ण और राधा दोनों का ही चित्रण हुआ है जिनके सामने बिहारी को कुछ झुके हुए हाथ जोड़कर खड़े होने की मुद्रा में चित्रित किया गया है। किन्तु बसोहली शैली के इस चित्र में बिहारी मात्र कृष्ण के सामने हाथ जोड़े प्रार्थनापरक मुद्रा में चित्रित हुए हैं, इसमें राधा अनुपस्थित हैं। राधा कृष्ण के चरित्र की कोमलता और उनकी कमनीयता तथा स्थिति की सौम्यता का चित्र राजदरबार में गुलेर की शैली में चित्रित हुआ है। बसोहली शैली के चित्र में राधा की अनुपस्थिति तथा भक्ति जैसे भावों के समय में चटकीले रंगों यथा लाल, पीला आदि का प्रयोग आँखों में चुभता है। जबकि जयपुर शैली के चित्र में रंगों का प्रयोग शांतिपूर्ण भाव में मटमैले तथा काले रंग के हाशिये के भीतर राजसी वैभव और दरबार में शांत वातावरण के अनुरूप रंगों का प्रयोग हुआ है। राधा-कृष्ण की मुद्राएँ भी इस चित्र में उत्तम बन पड़ी हैं।

(4)

“धनि यह द्वैज ; जहाँ लख्यो,तज्यौ दृगनु दुख-दंदु।

तुम भागनु पूरब उयौ अहो ! अपूरबु चंदु ।।”[8]

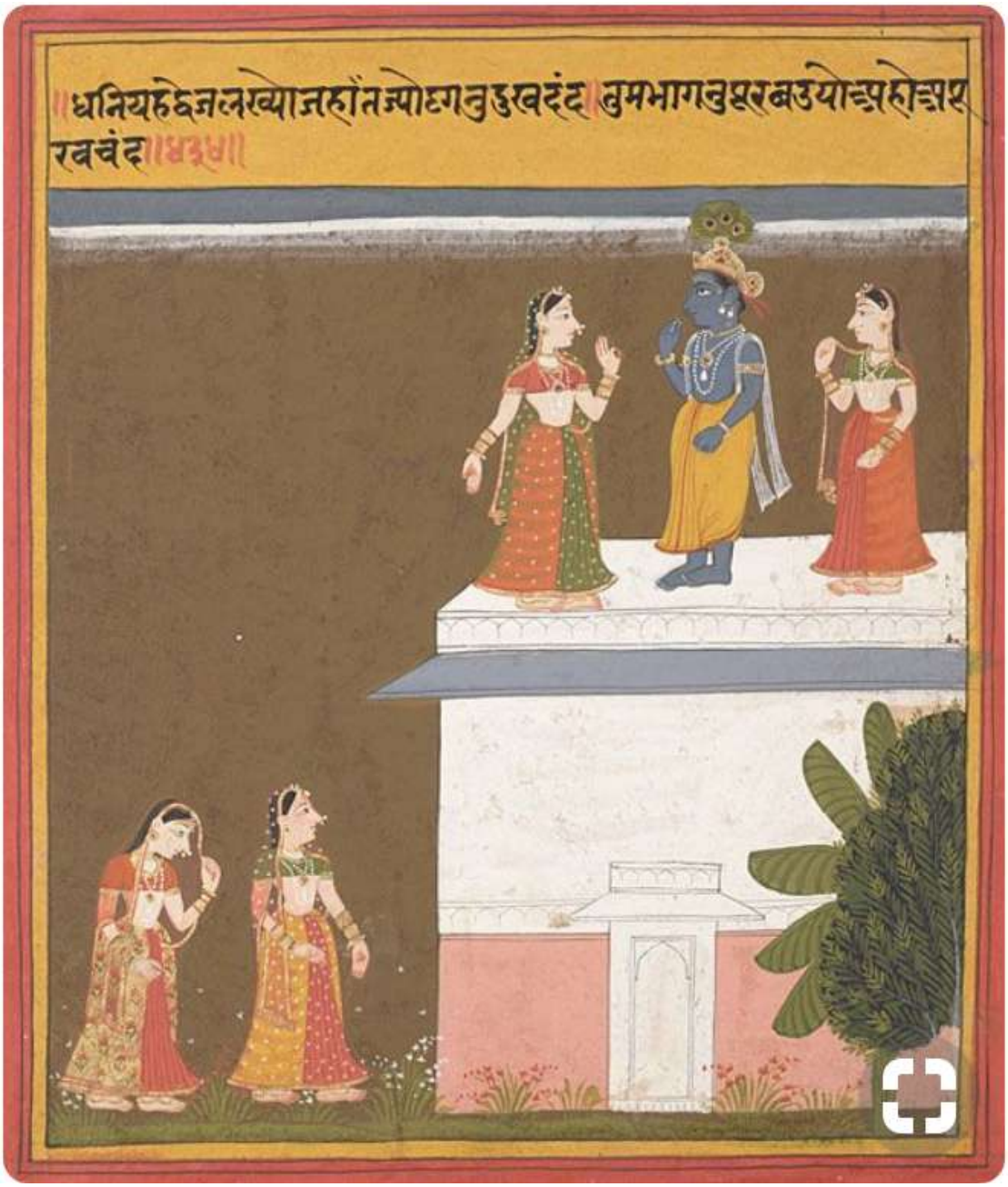

परिशिष्ट : चित्र - 7

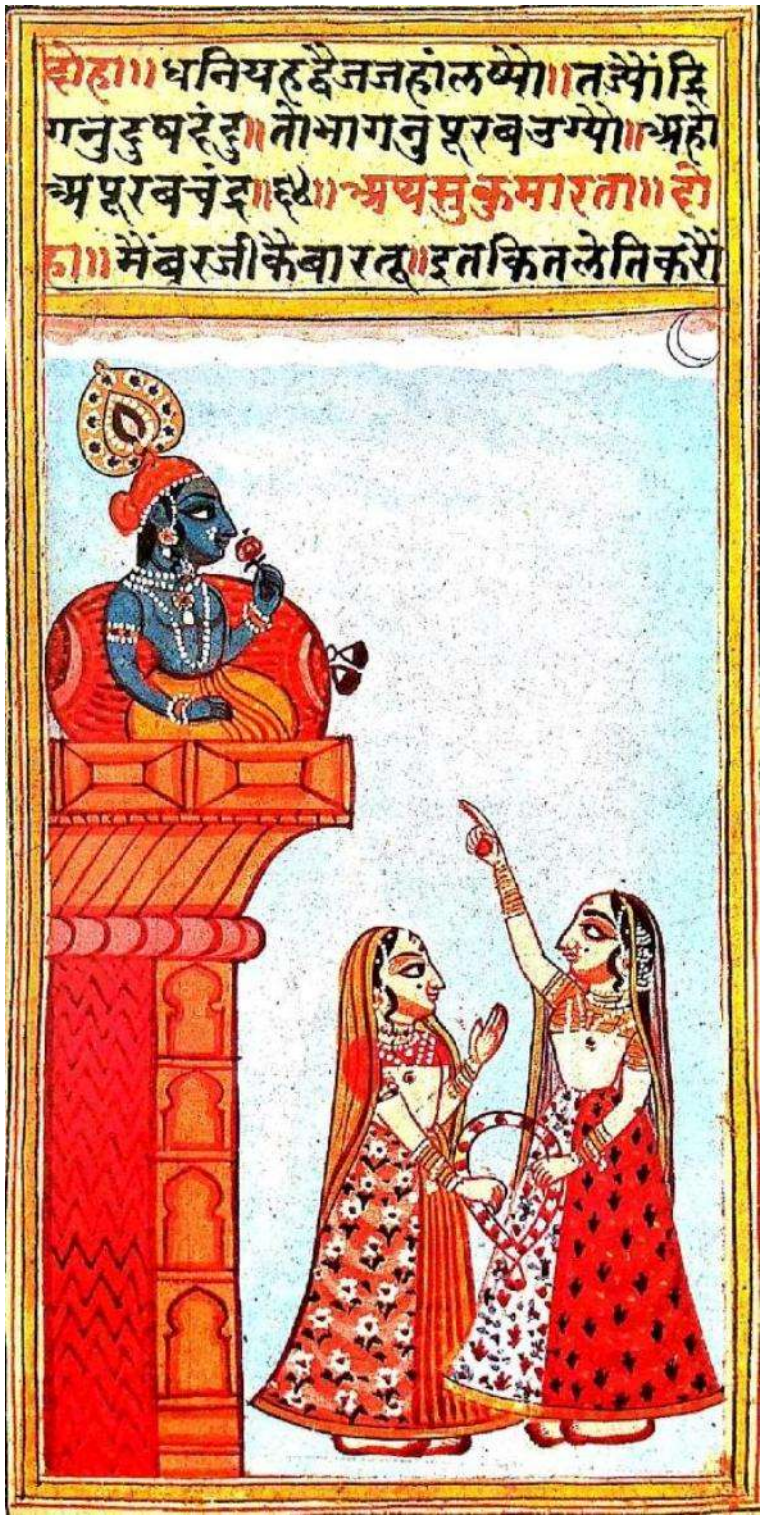
दोहा॥ धनियह हैजजहांलग्यो॥ तज्योंदि
गनुदुषदंदु॥ तोभागनुपूरबउग्यो॥ अहो
अपूरबचंद्र॥ ६४॥ अथसुकुमारता॥ दो
हा॥ मेंबरजीकेबारतू॥ इतकितलेतिकरौं

परिशिष्ट : चित्र - 8

दोहे के प्रसंगानुसार कोई पूर्वानुरागी नायिका नायक को देखे बिना संतप्त हो रही है। शुक्ल पक्ष की द्वितीया होने के कारण सखी चन्द्रमा देखने के उद्देश्य से ऊपर अटारी पर चढ़ी तो उसने नायक को उसके घर की अटा पर खड़े देखा। इसी बात को सखी नीचे आकर

नायिका से कहती है- (भावार्थ) यह द्वितीया पक्ष धन्य है क्योंकि इसी के कारण आज तुम्हारे भाग्य से अहो! पूरब दिशा में अपूर्व चन्द्रमा उदय हुआ है। अर्थात नायक इसी द्वेज में तुम्हारे भाग्य से पूर्व दिशा की ओर खड़ा दीख रहा है। तो हे सखी, तुम भी शीघ्र ही छत पर चढ़कर पूर्व में उदय हुए उस चन्द्रमा को देख लो क्योंकि जैसे ही तुम उसे देखोगी तैसे ही तुम्हारी आँखों में विरह के सभी दुःख-दर्द उसका ताप त्याग देंगे। इस घटना में विलक्षणता इस बात से है कि "जो नायक का मुखचन्द्र सखी नायिका को दिखाना चाहती है, उसमें अपूर्वताएँ ये हैं- प्रथम तो द्वितीय का चन्द्रमा केवल दो कला का होता है, पर वह पूर्ण है, दूसरे, द्वितीय के चंद्र का दर्शन पश्चिम दिशा में होता है, पर वह पूर्व दिशा में है; और तीसरे, चन्द्र-दर्शन से विरहिणी का संताप बढ़ता है, पर उसके दर्शन से ताप का शमन होगा।"[9]

उक्त दोहे में अगर गौर से देखा जाये तो ज्ञात होगा कि नायिका विरह की अवस्था से गुजर रही है इसलिए, सखी द्वारा नायक को देखे जाने पर वह शीघ्रता से नायिका को सूचित करती है जिससे नायिका अटारी पर चढकर सखी के साथ श्रीकृष्ण के सौंदर्य को देखकर अपनी विरहाग्नि को शांत कर सके।

बिहारी के इस पूरे भावबोध को मेवाड़ तथा बसोहली शैली के चित्रकारों ने रंगों के माध्यम से चित्रित करने का प्रयास किया है जिसमें बसोहली शैली के चित्र में भावों की यह गहनता और भी अधिक हो गयी है। इसमें नायिका को सखी भवन के बाहर नीचे खड़े होकर ऊपर की ओर दृष्टि करके अटारी पर खड़े श्रीकृष्ण को देखते हुए चित्रित की गयी है। बसोहली

तथा मेवाड़ दोनों ही शैली के चित्रकारों ने नायक-नायिका के रूप में राधा-कृष्ण को चित्रित किया है। मेवाड़ शैली के चित्र में नायिका के मुख पर नायक अर्थात कृष्ण को देखकर ऊपजे हर्षातित भावों की चमक है जबकि बसोहली में सखी कृष्ण की ओर संकेतित दिशा में राधा के साथ खड़ी है। इस चित्र में एक अन्य दोहे का भी अंकन हुआ है परंतु इस चित्र के चित्रांकन से इसमें लिखित अन्य दोहे का स्पष्ट सम्बन्ध ज्ञात नहीं होता जिस कारण इसका उल्लेख यहाँ नहीं किया गया है।

मेवाड़ के इस चित्र में चन्द्रमा का चित्र कहीं भी नहीं खींचा गया है परन्तु, बसोहली के चित्र में चित्रकार ने क्षितिज तथा चाँद को चित्रित किया है। जिसकी विशेषता है कि इन चित्रों में ऊँचा क्षितिज बना है जो कि ऊपर की ओर एक पट्टी के आकर का है। इसे देखते ही इस शैली को सरलता से पहचान लिया जाता है, "इस छोटे से पट्टीनुमा क्षितिज में ही रात्रि एवं दिन का चित्रण तारे तथा बादल आदि से किया गया है"[10]

रंगों के प्रयोग में चटकीले रंगों के साथ लाल, पीले, नीले तथा सफ़ेद रंग का प्रयोग बहुत ही सुंदर ढंग से बसोहली शैली में हुआ है क्योंकि लाल-पीले रंग और सोने से निर्मित हाशिये में लाल, पीले, हरे, नीले लगभग सभी रंगों का पार्श्व में प्रयोग सामान्य ढंग से किया गया है।

(5)

"छिनकु चलति, ठठुकती छिनकु भुज प्रीतम-गल डारि।

चढ़ी अटा देखति घटा बिज्जु-छटा सी नारि।।"[11]

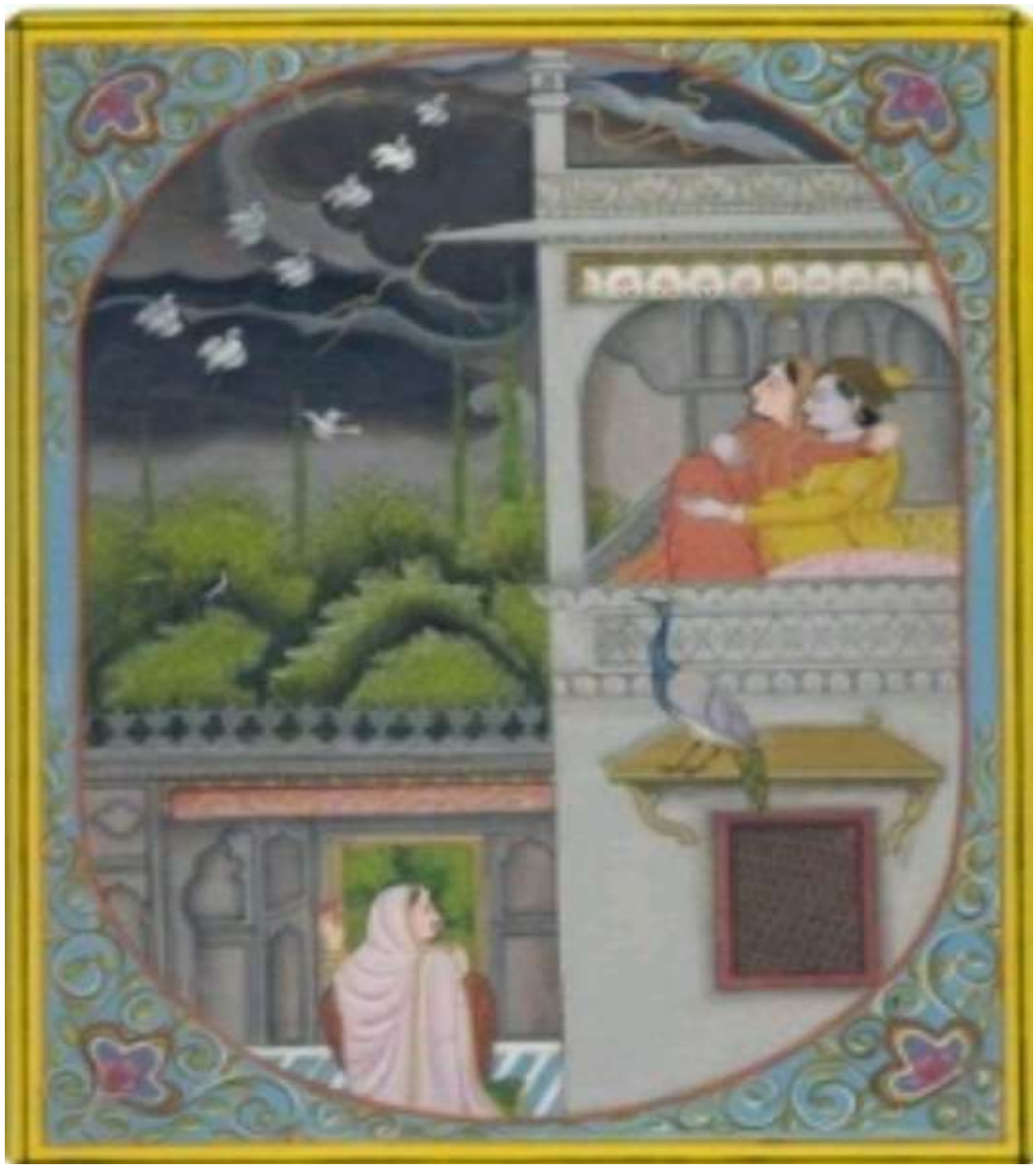

परिशिष्ट : चित्र - 9

परिशिष्ट : चित्र - 10

नायिका नायक के साथ अटारी पर चढ़कर उमड़ते घुमड़ते बादलों को देख रही है। इसी क्रम में वह कुछ चेष्टाएँ और क्रियाएँ भी कर रही है जिसे पूरे क्रम से बिहारी व्यक्त करते हैं कि- (भावार्थ) कभी वह नायिका प्रियतम के गले में हाथ डाले थोड़ा सा चलती है और फिर पल भर के लिए ठहर जाती है। नायिका स्वयं बिजली के समान लावण्यमयी होकर प्रियतम के साथ अटारी पर बादलों का उमड़ना देख रही है। इस दोहे का एक अर्थ बच्चन जी के शब्दों में भी इस प्रकार है, "बिजली की ज्योति की तरह लावण्यमयी नायिका घिरे हुए बादलों की शोभा निहार रही है। प्रियतम के गले में बाँह डालकर क्षणभर कभी चलती है और कभी क्षणभर के लिए ठिठक जाती है। 'भुज प्रियतम गल डारि' की व्यंजना घटा के प्रसंग में कितनी गूढ़ और मनोवैज्ञानिक बन पड़ी है।"[12]

बिहारी के उक्त दोहे में नायिका का प्रियतम के गले में भुजाएं डाले क्षण भर चलना, फिर क्षण भर के लिए ठिठकना आदि सभी मुद्राएँ तथा भंगिमाएँ पूरे चित्र को साकार कर देती हैं। ऐसे ही चित्र उक्त दोहे को आधार बनाकर बसोहली तथा काँगड़ा शैली में भी किसी चित्रकार द्वारा रचे गये परिलक्षित होते हैं। इन दोनों चित्रों में बिहारी के इस दोहे के भावबोध तथा नायक-नायिका की भाव-भंगिमाओं और चेष्टाओं को बिहारी के संकेतानुसार उभारा गया है परन्तु फिर भी इनमें कुछ अंतर अवश्य है जो इनका शैलीगत भेद हो सकता है। बसोहली शैली के निर्मित चित्र में नायक-नायिका राधा-कृष्ण के रूप में अटारी पर चित्रित किये गये हैं जबकि काँगड़ा शैली में वे स्पष्ट रूप में नायक-नायिका के रूप में ही अटारी पर चित्रित हुए हैं। बसोहली शैली के चित्र में बादलों में बिजली कड़कने का चित्रण विशेष है। इस चित्र में, "बादलों में नागिन के समान चमकती हुई दामिनी की चमक दिखाई गयी है। दामिनी की चमक को सोने के रंगों से दिखाया गया है।"[13] जबकि काँगड़ा शैली के चित्र में बादलों तथा बिजली के स्वाभाविक रूप में चित्रित किया गया है और क्षितिज पर सारस पक्षियों को

भी उड़ते हुए दिखाया गया है। बसोहली शैली के चित्र में राधा-कृष्ण रुपी नायक-नायिका को खड़ी हुई मुद्रा में चित्रित किया गया है जबकि काँगड़ा शैली के चित्र में नायक-नायिका को सफेद संगरमरमर के भवन की अटारी पर बैठे हुए का चित्रण है। बसोहली शैली के मुकाबले काँगड़ा शैली के चित्र में नायक-नायिका का एक-दूसरे के गले में बाँहे डाले भावों का सम्प्रेषण, कमनीयता, प्रेमानुराग तथा कोमल वातावरण का चित्रण अधिक हुआ है, "काँगड़ा शैली की आकृतियों में अंग-भंगिमाओं एवं हस्त-मुद्राओं का सजीव एवं गतिपूर्ण अंकन हुआ है। स्त्री मुखाकृतियों में अद्वितीय सौन्दर्य, शालीनता और संयम प्रदर्शित है।"[14] बसोहली में आलेखन युक्त दरवाजे के भवन की अटारी पर खड़े राधा-कृष्ण की मुद्रा काँगड़ा शैली के चित्र के समक्ष भावप्रवणता में कमजोर दीख पड़ती है। रंगयोजना का ध्यान रखते हुए काली घटाओं के प्रभाव को दर्शाने हेतु पूरे दृश्य पर बादलों की काली छाया अनुसार रंगों को थोडा अँधियारा लिए रखा है। नायिका ओढ़नी तथा नायक को जामा और पगड़ी पहनाये हुए दिखाया गया है, जबकि बसोहली शैली के चित्र में चटकीले रंगों यथा पीला, लाल, हरा, सफेद रंग अधिक प्रयोग में लाया गया है।

3.2 : बिहारी के काव्य पर एक शैली में निर्मित हुए चित्र

(1)

"अधर धरत हरि कैं, परत ओठ-डीठि-पट-जोति।

हरित बाँस की बाँसुरी इन्द्रधनुष-रंग होति।।"[15]

परिशिष्ट : चित्र - 11

बिहारी द्वारा रचित इस दोहे में राधा की सखी कृष्ण को बाँसुरी बजाते हुए देखकर आई है। जिसका वृत्तांत कृष्ण के सौंदर्य की प्रशंसा करते हुए वह राधा को सुनाते हुए कहती है कि कृष्ण द्वारा बाँसुरी बजाने के निमित्त ज्योंही उस हरे रंग की बाँसुरी को अपने अधर से कृष्ण ने लगाया त्योंही उनके होठों की लालिमा, नेत्रों की श्यामलता तथा पट की पियराई की चमक से, कृष्ण के इस बहुरंगी सौन्दर्य के प्रभाव से वह हरे रंग की बाँसुरी भी इन्द्रधनुष के रंग सी रंग-बिरंगी हो गयी है। बिहारी का यह दोहा पढ़ते ही नेत्रों के समक्ष एक अदृश्य तस्वीर उभरने लगती है जिससे एक ओर कृष्ण सभी के सामने बाँसुरी बजा रहे हैं और दूसरी ओर सखी राधा को उस घटना का वृत्तांत सुना रही है। कृष्ण के सौन्दर्य का इस दोहे में शब्दों द्वारा चित्रांकन विशेष है। इस सौन्दर्य में कृष्ण के होठों की लालिमा, नेत्रों की श्यामलता और पट की पियराई इतनी मनमोहक और प्रभावशाली है कि कृष्ण के होठों से लगी बाँसुरी भी इस लालिमा, श्यामलता तथा पियराई के रंग में रंगकर इनके संयोग से इन्द्रधनुष जैसी बहुरंगी चित्रित हो जाती है।

बिहारी का उक्त दोहा सिर्फ शब्दों के चित्रांकन में ही नहीं रंगों द्वारा किये गये चित्रांकन में भी सफल है क्योंकि मेवाड़ शैली में बिहारी के इस दोहे पर बना एक चित्र प्राप्य है जिसमें इस दोहे में अभिव्यक्त सभी भाव और कर्म के साथ-साथ मेवाड़ शैली की सभी विशेषताएँ भी समाहित हैं। मेवाड़ शैली के उक्त दोहे पर निर्मित चित्र में मुख्यतः रंगयोजना के अनुरूप लाल, पीला तथा जोगिया रंग अधिक प्रयोग में लाया गया है तथा पार्श्व में कुछ और चटकीले रंगों यथा- नीला, काला आदि का भी उत्तम प्रयोग हुआ है। गोपियों के बीच बाँसुरी बजाते हुए कृष्ण का चित्रण है, वहीं पास में सखी राधा को वह वृत्तांत सुनाने की मुद्रा में चित्रित है।

आकृतियों के चित्रण में सभी की नाक लम्बी तथा गर्दन और ठोड़ी के बीच के हिस्से को अधिक भारी दिखाया गया है। सभी स्त्रियों का चित्रण मेवाड़ के चित्रों के अनुरूप साज-सज्जा और आभूषण सुसज्जित किये गये हैं और सभी के वस्त्रों लहंगा, चुनरी, चुनरी पर फूलों से कलाकारी है। पारदर्शी चुनरी का चित्रण इस शैली की एक खास विशेषता है। मेवाड़ शैली का यह चित्र प्रकृति के चित्रण में भी विशेष बना हुआ है क्योंकि इस चित्र में यमुना नदी के जल को कालिया सर्प के प्रभाव के कारण काला ही चित्रित किया गया है तथा उमड़ते-घुमड़ते काले मेघों का चित्रण इस चित्र में सजीव बन गया है।

मेवाड़ शैली का यह चित्र बिहारी के उक्त दोहे को भावों, मुद्राओं तथा भंगिमाओं के आधार पर चित्रित करने में जितना सफल है उतना ही इसके चटकीले रंगों के संयोजन, प्रकृति के सजीव चित्रण तथा वेशभूषा और लयात्मक आकृतियों से इस दोहे में सजीवता आ गयी है।

(2)

"औंधाई सीसी, सु लखि बिरह- बरनि बिललात।

बिच हीं सूखि गुलाब गौ, छीटौ छुई न गात।।"[16]

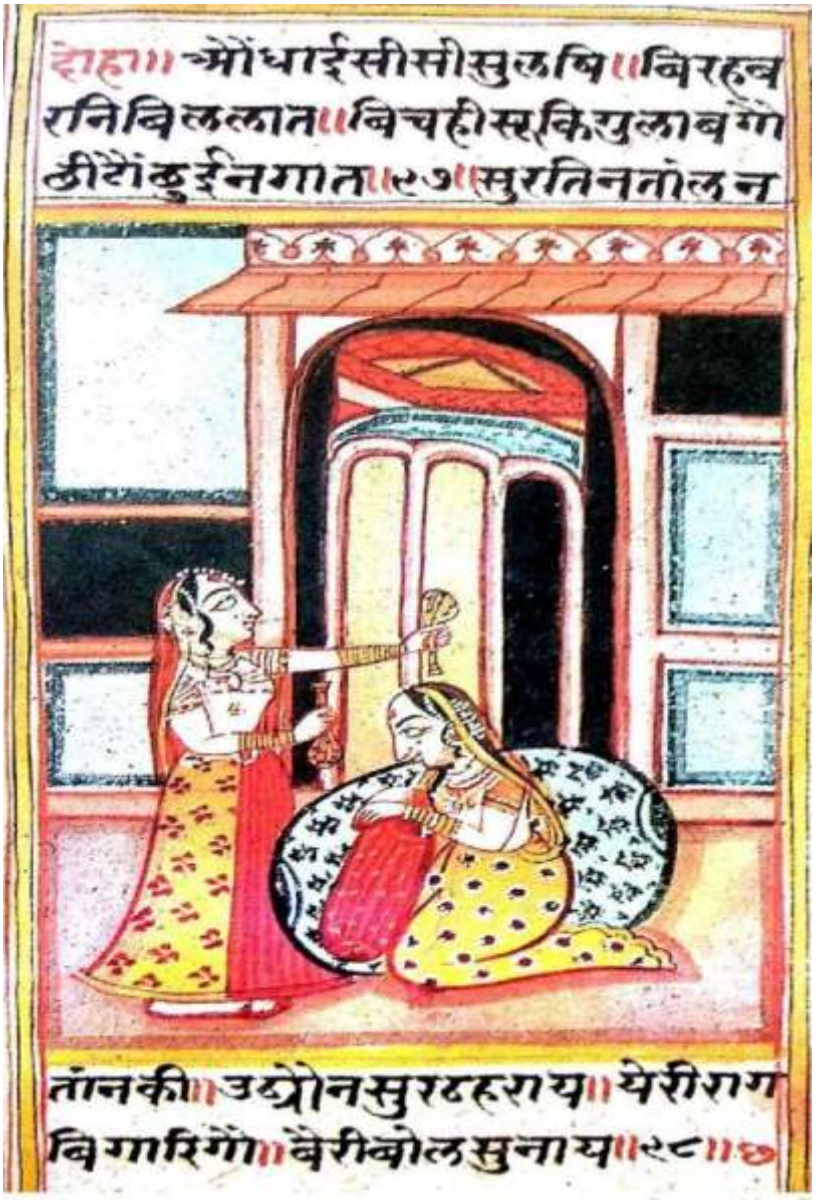

परिशिष्ट : चित्र -12

नायिका के विरह ताप का वर्णन सखी नायक से करती है कि- उसके पिय से बिछुड़ने का विरह ताप इतना अधिक है कि उसके विरह की भभकती अग्नि को देखकर उसे ठंडक पहुंचाने के निमित्त हमने जो गुलाब जल की भरी शीशी नायिका के ऊपर औंधाई वह भी उसकी विरह की ज्वाला में एक बूँद भी उस नायिका पर पड़े बिना ही बीच में ही सूख गयी अर्थात् विरह ताप से गुलाब जल भी वाष्प बनकर उड़ गया। इस दोहे में विरह का अतिश्योक्तिपूर्ण वर्णन बिहारी ने किया है, परन्तु नायिका की विरह जन्य कृशता पर बसोहली शैली के चित्रकारों ने चित्र निर्माण किया है। इस चित्र में नायिका की सखी नायिका पर गुलाब जल की शीशी उड़ेलते हुए चित्रित है। इस चित्र में शीशी से एक भी बूँद नायिका के ऊपर गिरती हुई चित्रांकित नहीं हुई है। जिससे इस दोहे का अतिशयोक्तिपूर्ण भाव भी इस चित्र में समाहित हो गया है। परन्तु यह चित्र इन दोनों सखियों के विशाल अबोधपूर्ण नेत्रों, ढलवा

माथा, सुंदर वस्त्रों अर्थात् सौन्दर्य और सुंदर रंगयोजना यथा- पीले, लाल, नीले रंगों के मिश्रण के साथ चमकदार तथा प्रतीकात्मक रूप में हुआ है, "स्त्री मानव-प्रेम की प्रतीक है।...जन्म-जन्मांतर से व्यथित नारी रुपी आत्मा पुरुष रुपी परमात्मा या प्रियतम में विलीन होने के लिए विह्वल है।"[17] डॉ. अविनाश वर्मा के ये शब्द बसोहली शैली में विरह व्यथित स्त्री तथा रंगों की प्रतीकात्मकता में आत्मा का परमात्मा में विलीन होने की आकांक्षा लिए लौकिक, सांसारिक पक्ष के माध्यम से लोकोत्तर चित्रण को इन चित्रकारों का मंतव्य मानते हैं।

(3)

"कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत, लजियात।

भरे भौन में करत हैं , नैननु हीं सब बात।।"[18]

परिशिष्ट : चित्र - 13

इस दोहे में आँखों की चेष्टायें प्रेम में कितनी महत्तवपूर्ण होती है इस भाव की झलक मिलती है। पूरा एक गतिशील चित्र बिहारी इस दोहे में अनेक क्रियाओं तथा चेष्टाओं के माध्यम से सामने लाकर रख देते हैं। प्रेम में संवाद के लिए शब्दों की जरुरत ही नहीं होती, वहाँ तो बिन कुछ कहें आँखों से ही पूरे संवाद हो जाया करते हैं। इसी पर बिहारी का यह दोहा है, जहाँ नायक और नायिका भवन में गुरुजनों के साथ बैठे हैं, ऐसे में वे दोनों लोक-लाज से स्पष्ट रूप में बात कर नहीं सकते तो इसके लिए बातचीत शुरू होती है आँखों के माध्यम से-

(भावार्थ) इनमें नायक-नायिका से आँखों की चेष्टाओं द्वारा कुछ कहता है, शायद रति क्रिया के लिए, जिसके लिए नायिका नट जाती है अर्थात् इंकार कर देती है। वह इंकार भी ऐसा है जिसमें 'मन में भाय मूड हिलाय' वाली स्थिति से। नायिका की इसी अदा पर नायक उसकी निषेधात्मक चेष्टा पर रीझ जाता है और नायिका को उसकी रीझ से सभाजनों के बीच लाज के कारण खीझ उत्पन्न हो जाती है। इस कथन, इनकार, रीझ, खीझ के बीच ही दोनों की आँखें पुनः एक-दूसरे से मिल जाती हैं जिससे नायक-नायिका प्रफुल्लित हो जाते हैं। नायक नायिका के झटपट खीझ को त्याग देने पर हँस देता है जिससे उसकी हँसी से नायिका लज्जित हो जाती है।

इस दोहे पर आधारित एक चित्र काँगड़ा शैली का भी मिलता है जिसमें एक भवन में कुछ लोग उपस्थित हैं उन्हीं में कृष्ण तथा राधा भी नायक-नायिका के रूप में उपस्थित हैं, परन्तु वे वहाँ लोक-लाज के कारण शब्दों की बजाय आँखों ही आँखों में पूरा वार्तालाप कर अपना प्रेम एक-दूसरे के लिए प्रकट कर रहे हैं। "नायिका कृष्ण की ओर देखती है तो कृष्ण ने अभिसार के लिए प्रार्थना की(कहत) तो नायिका ने सहज ही उस प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया(नटत) नायक-नायिका की अस्वीकृति को स्वीकृति मानकर मुग्ध हो जाता है(रीझत)

और नायिका जब यह देखती है कि नायक ने उसकी ना का अर्थ हाँ लगाया, तो वह खीझ उठती है। नायिका की यह खीझ किंचित बनावटी है, क्योंकि उसका मूल उद्देश्य नायक को केवल खिझाना है. नाराज करना नहीं है। तदन्तर दोनों की दृष्टि मिल जाती है (मिलत) और फिर दोनों ही प्रेम के रंग में डूबकर प्रफुल्लित हो जाते हैं (खिलत)। तथापि दोनों को यह भी आशंका है कि कहीं उनके इस प्रणय-व्यापार पर, वहाँ उपस्थित किसी व्यक्ति की दृष्टि न पड़ गई हो। अतः स्वभावतः दोनों को लज्जा का भी अनुभव होता है (लजियात)।"[19]

इस प्रकार प्रेम की पूरी अभिव्यक्ति बिहारी के इस दोहे की तरह काँगड़ा शैली के इस चित्र में भी हो जाती है। चित्र में नायक-नायिका की चेष्टायें बिहारी ने कितनी मनमोहक खींची हैं, उसका कुछ अंश चित्र में भी दिखाई पड़ता है। नायिका नायक की ओर मुख किये हुए है और यह पूरा वार्तालाप सांकेतिक माध्यम से दोनों के बीच चल रहा है। रंगों का सुंदर प्रयोग इस शैली के चित्र में हुआ है। आलेखन द्वारा हाशिये निर्मित किये गये हैं तथा संगरमरमर से निर्मित भवन के भीतर दोनों का चित्रण हुआ है। जिसमें नायक-नायिका का चेष्टागत वर्णन दृश्यमान हो गया है।

(4)

"उर मानिक की उरबसी डटत घटतु दृग-दागु।

छलकतु बाहिर भरी मनौ तिय-हियकौ-अनुरागु।।"[20]

परिशिष्ट : चित्र - 14

यह कथन खंडिता नायिका का है जो शब्द चित्रांकन का स्पष्ट उदाहरण है। यह चित्रांकन प्रेम और पीड़ा के भावों को व्यक्त करता है। नायक के प्रातःकाल में घर आने पर उसके हृदय के पास लटकी मानिक की उरबसी (गले में पहनने का आभूषण जिसका माणिक हृदय के पास लटका होता है) को देखकर आहत हुई है। नायक भूषण वसन का विपर्यय करके रात्रि में अन्य स्त्री के साथ विहार में लीन था। प्रातःकाल नायिका के पास जाने से पूर्व उसने अपने सम्पूर्ण वस्त्र तो बदल लिए, परन्तु वह उरबसी उतारना भूल गया, जिसे प्रातःकाल नायिका घर पर देख लेती है और उसकी पीड़ा व्यक्त करती हुई कहती है- (भावार्थ) यह जो तुम्हारे हृदय पर माणिक की उरबसी है यह मेरी आँखों में ठहर गयी है, इसे मैं पहचानती हूँ। अर्थात् मुझे यह उरबसी देखकर ज्ञात हो गया है कि कल तुम किसी अन्य के साथ केलि-क्रीड़ा में थे। वह व्यंजक ढंग से कहती है कि मेरे नेत्रों में जो तुम्हें न देख पाने के कारण एक जलन, चुभन, अग्नि स्वरुप थी वह अब तुम्हे देखकर और भी अधिक बढ़ गयी है। यह उरमानिक तुम्हारे पर ऐसी शोभा दे रही है जैसे तुम्हारे भीतर का स्त्री-विषयक हृदय का अनुराग परिपूर्ण होकर बाहर झलक रहा हो।

बिहारी द्वारा रचित इस दोहे पर मेवाड़ शैली में एक चित्र भी बना है जिसमें दो दृश्यों को दिखाया गया है। एक दृश्य काले रंग के वातावरण में दीपक की रोशनी से तथा नायक का अन्य स्त्री के साथ केलि में मग्न होना स्पष्टत: रात्रि की ओर संकेत करता है तो वहीं दूसरे दृश्य में नायक को नायिका के सामने बैठा हुआ चित्रित किया गया है। इस पूरे चित्र में रंगयोजना विशेष है। पूरे चित्र को प्रधानत: लाल और पीले स्वर्ण रंग के बॉर्डर से सुसज्जित किया गया है। रात्रि के दृश्य में आस-पास काले रंग से अँधेरा तथा जलता हुआ दीपक दिखाकर रात्रि की गहनता उजागर की गयी है तो साथ ही प्रातः के दृश्य में हरे रंग के प्रयोग द्वारा हरियाली के बीच महल में नायक का नायिका के सामने बैठा होना चित्रित है। रात्रि के दृश्य में केलि-क्रीड़ा

प्रसंग को दिखाने के लिए नायक के साथ शैय्या पर स्त्री को भी दिखाया गया है। भंगिमाओं में एक ओर स्त्री की प्रसन्नचित्त मुद्राएँ हैं तो दूसरी ओर नायिका की आँखों में उरबसी को देखकर उपजी वेदना और क्रोध। इस प्रकार बिहारी द्वारा रचित यह शब्दों के माध्यम से चित्र निर्माण में जितना सफल है उतना ही चित्रकार द्वारा दोहे के माध्यम से मानस में बने चित्र को फलक पर उतारकर और अधिक प्रभावशाली बनाने के क्रम में इस चित्र की शैली तथा दृश्य अनुरूप रंगों के संयोजन से इसमें विशिष्ट प्रभाव उत्पन्न हो गया है।

(5)

"पाइ महावर दैंन को नाइनि बैठी आइ।

फिरि फिरि, जानि महावरी एड़ी मीड़ति जाइ।।"[21]

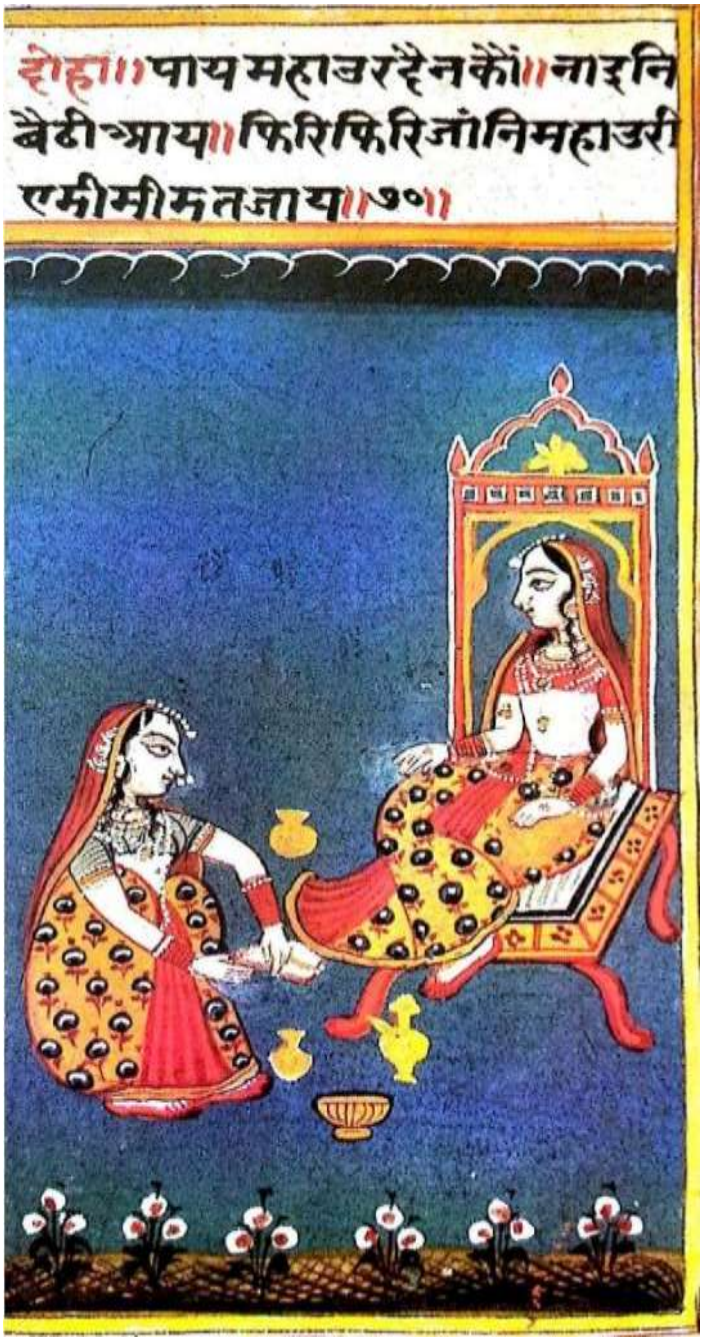

परिशिष्ट : चित्र - 15

नायिका की एड़ी की लालिमा की आपस में प्रशंसा करते हुए नाइन के कार्य पर सखियाँ परिहास करती हैं- (भावार्थ) पाँव में महावर लगाने के लिए नाइन आकर बैठी है और वह नायिका के बहुत अधिक लालिमायुक्त पाँव को देखकर महावर की गोली और पाँव की एड़ी में कुछ भेद ही नहीं कर पा रही। इसी भ्रम में वह एड़ी को ही महावर की गोली समझकर फिर-फिर मीड़ती अर्थात मरोड़े जा रही है।

बिहारी का उक्त दोहा नायिका की एड़ी की अत्युक्तिपूर्ण प्रशंसा का है। इसके बावजूद भी इसमें चित्रांकन की संभावनाओं को बसोहली शैली के चित्रकारों ने खोजते हुए इस दोहे पर आधारित चित्रों को फलक पर उतारने का प्रयास किया है। बसोहली शैली के चित्र में नायिका को आसन पर बैठे हुए चित्रित किया गया है जिसके पैर को नाइन पकड़ कर बैठी है और एड़ी पर हाथ मसल रही है। पार्श्व में नीले रंग का अधिक प्रयोग कर इस चित्र में पीले, लाल रंग से हाशिये का निर्माण किया गया है। इसमें शैली चित्रों की प्रकृति अनुसार आकृतियों तथा रंगों के प्रयोग हुआ है। इस चित्र में नायिका और नाइन की मुद्रा तथा चेहरे के भाव उक्त दोहे अनुरूप ही हैं।

(6)

"कर के मीड़े कुसुम लौं गई बिरह कुम्हलाइ।

सदा-समीपिनि सखिनु हूँ नीठि पिछानी जाइ।।"[22]

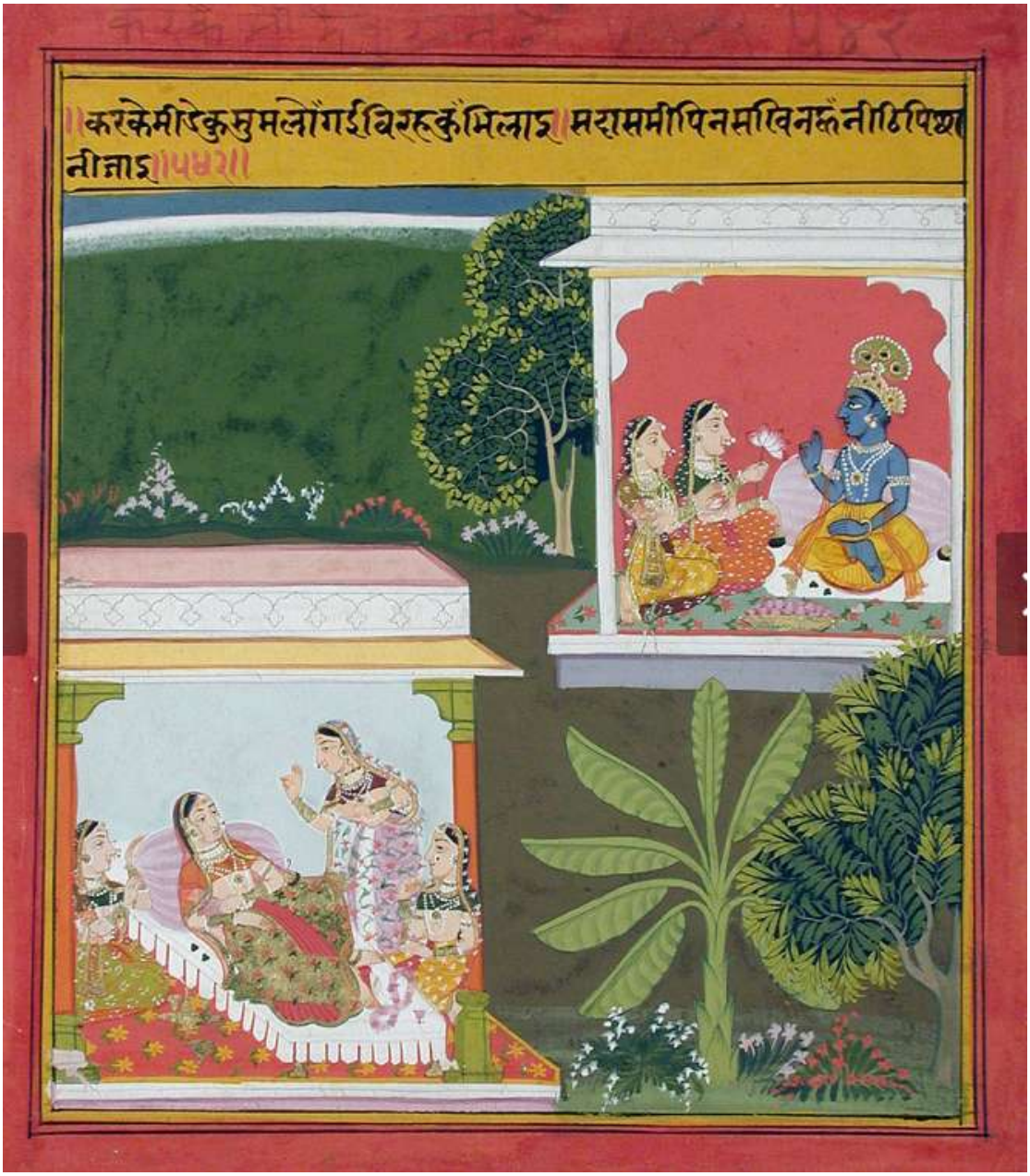

परिशिष्ट : चित्र - 16

नायिका की विरह में व्यथित दशा का वर्णन सखी नायक से करती है कि वह विरह में इस प्रकार से कुम्हिला गयी है, जिस प्रकार हाथों से मसला हुआ फूल। उस नायिका की विरह में यह दशा हो चली है कि नायिका के सदा समीप रहने वाली उसकी सखियाँ भी अब उसके विरह से कुम्हलाये शरीर के कारण उसको पहचानने में कठिनता महसूस करती हैं। इस चित्र में नायिका की भंगिमाएँ भी उसकी दशा के अनुसार शिथिल है जिससे उठना भी मुश्किल हो रहा है वहीं सखियों की चिंता इस बात से स्पष्ट है कि वह स्वयं नायक के पास जाकर उसकी सारी दशा कह देती हैं।

बिहारी का यह दोहा पढ़ते ही जो दृश्य उभरता है, वह एक बहुत ही कृशताजन्य नारी का जिसके पास कुछ सखियाँ बैठी हैं। नायिका विरह की ज्वाला में नित-नित दग्ध होकर कमजोर होती जा रही है। उसकी इसी विरहदशा का वर्णन नायिका की सखियाँ नायक से करती हैं।

इस दोहे पर मेवाड़ शैली में निर्मित एक चित्र अपने कक्ष में बिस्तर पर लेटी हुई क्षीणकाय नायिका तथा उसके पास बैठी और उसे समझाने का प्रयास करती कुछ सखियों का है। यह सभी स्त्रियाँ कमलनयनी हैं तथा परम्परागत आभूषणों और वस्त्रों को धारण किये हुए हैं। इस चित्र में चित्रित एक अन्य दृश्य वह भी है जिसमें नायिका की दो सखियाँ नायक रुपी कृष्ण के सामने नायिका की उस कुम्हिलाई अवस्था का वर्णन करते हुए चित्रित की गयी हैं जिसमें अब वह नायिका अपनी ही सखियों से बहुत मुश्किल से पहचानी जा रही है। मेवाड़ शैली के इन चित्रों की एक विशेषता यह भी है कि इसमें नायक नायिका को कृष्ण तथा राधा के रूप में चित्रित किया गया है, इन्हें परम्परागत वस्त्रों यथा- फूलों से चित्रित लहंगा-चोली, पारदर्शी चुन्नी आदि तथा आभूषणों, कंठाहार, बाजूबंद आदि से सुसज्जित किया गया है।

सभी चित्रों में नाक का आभूषण स्त्रियों के लिए विशेष है। क्षीणकाय नायिका का चित्रण अवस्थानुरूप किया गया है, तथा उक्त दोहे पर बने इस मेवाड़ शैली के चित्र के रंग संयोजन में चटकीले रंगों के प्रयोग की अधिकता है। लाल, पीला रंग इसके बॉर्डर अर्थात् बाहरी सजावट के लिए प्रयोग हुआ है और चित्र के भीतर हरे रंग का प्रयोग प्राकृतिक उपादानों को दिखाने के लिए अधिक हुआ है।

(7)

"कर-मुँदरी की आरसी प्रतिबिंबित प्यौ पाइ।

पीठी दीयैं निधरक लखै इकटक डीठि लगाइ।।"[23]

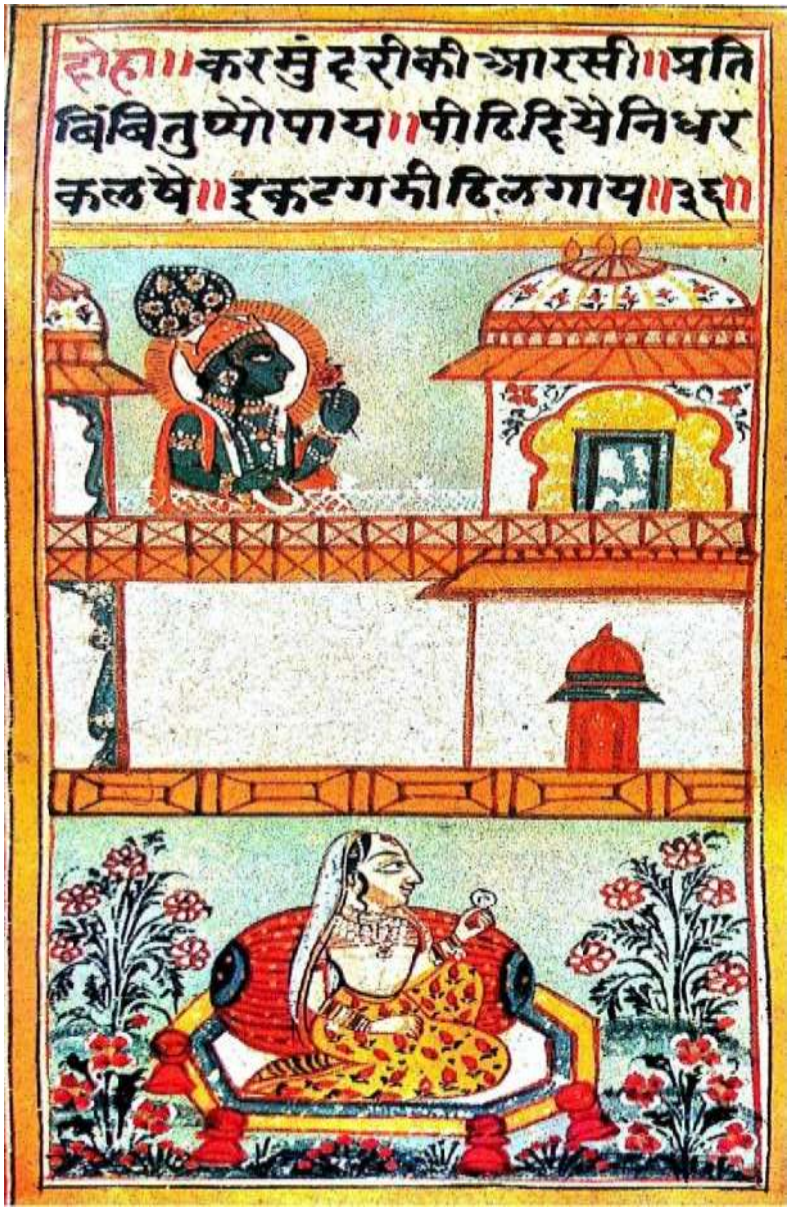

परिशिष्ट : चित्र - 17

कविवर बिहारी द्वारा यहाँ नायिका की चतुराई का वर्णन है जो लोकभय को ध्यान में रखते हुए अपने प्रियतम की छवि को निहारने का नया मार्ग निकल चुकी है। बिहारी बताते है कि नायिका अपने हाथ की अँगुठी के दर्पण सामान नग में प्रिय के प्रतिबिम्ब की छाया पाकर नायक की ओर पीठ दिए ही अपनी अँगूठी के दर्पण में अपने प्रियतम को लोक लाज की शंका से रहित होकर एकटक दृष्टि से देख रही है। नायिका राधा का यह चतुराई पूर्ण क्रियात्मक वर्णन लोकभय को भी दिखाता है और प्रेम में हर तरह के प्रयास से अपने प्रियतम को अपने पास लाने के भाव को भी वर्णित करता है। बिहारी ऐसे चातुर्य पूर्ण वर्णन तथा सामाजिक बन्धनों को दिखाने में भी पीछे नहीं रहे हैं। नायिका द्वारा नायक को हाथ की अँगूठी के नग रुपी दर्पण में देखती हुई तथा उस और पीठ दिए ही एकटक दृष्टि से देखते ही रहना प्रेमी युगल का चित्र आँखों के सामने ला देता है। इस दोहे पर बसोहली शैली में उत्तम चित्र बना है। इस चित्र में "आलेखनों से युक्त द्वार, जालीदार खिड़कियाँ, नक्काशीदार लकड़ी या पत्थर के स्तंभों से युक्त भवन"[24] का चित्रांकन हुआ है। नायक-नायिका रूपी कृष्ण-राधा ऐसे ही भवन में चित्रित हैं। नायक ऊपर की तरफ अपने भवन की अटारी पर खड़ा है और राधा अपने भवन के आँगन में बैठ कर हाथ की अँगूठी लेकर श्रीकृष्ण को उसमे नित टकटकी लगाकर निहार रही है। राधा की मुद्रा उस फूलों से सुसज्जित बाग में हाथ में मुंदरी लेकर बहुत ही सुंदर तथा मनोहारी लग रही है। चित्र की रंगयोजना में हाशिये पर पीले रंग का प्रयोग हुआ है तथा पार्श्व में केसरिया, पीला तथा नीले रंगों का प्रयोग है। पीला रंग बसोहली शैली में बसंत का भी प्रतीक माना जाता है।

(8)

"कर समेट कच भुज उलटि, खऐं सीस-पटु टारी।

काकौ मनु बाँधै न यह जूरा बाँधनहारि।।"[25]

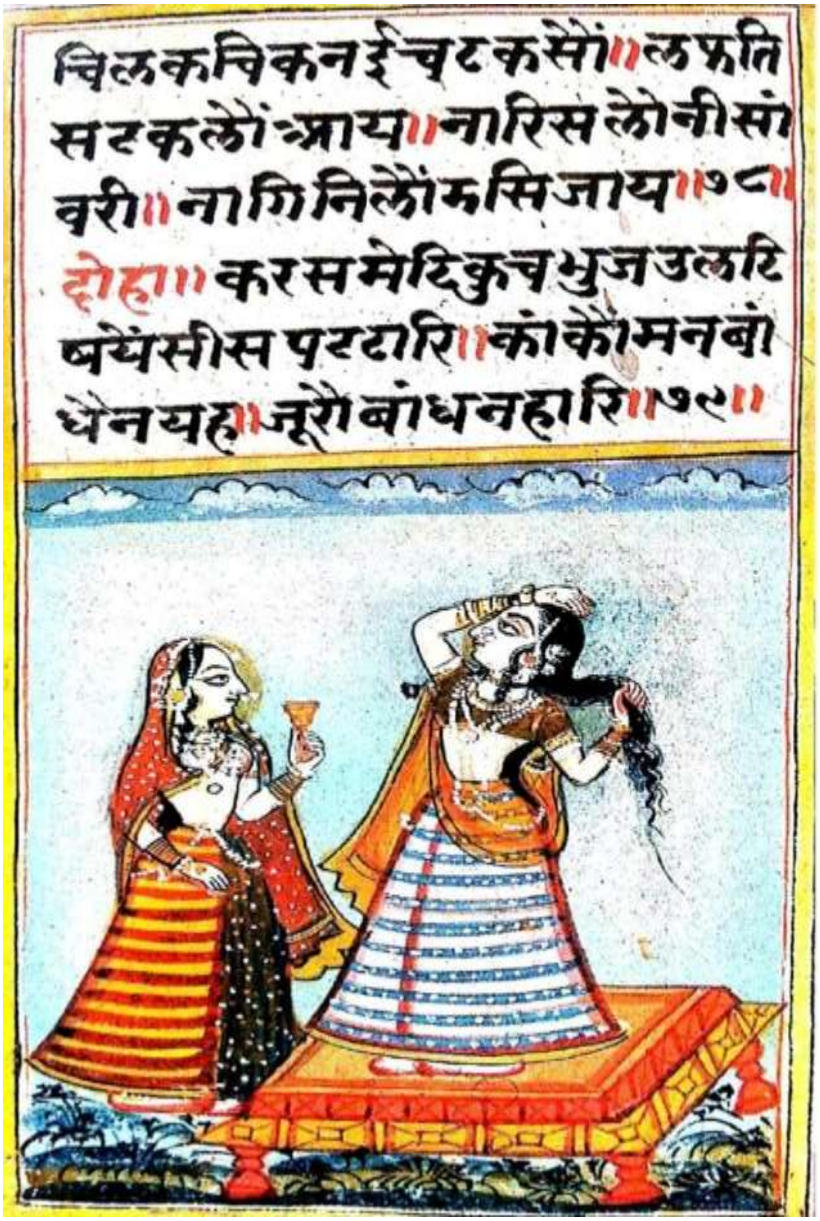

परिशिष्ट : चित्र - 18

इस दोहे में नायिका के जूड़ा बांधते समय की मनोहारिणी चेष्टाओं को देखकर नायक स्वगत कहता है- यह पीछे की ओर उल्टे हाथों से बालों को समेटकर भुजमूलों पर सर का वस्त्र हटाकर यह जूड़ा बाँधने का प्रयास करने वाली नायिका किसका मन अपने इस जूड़े के साथ नहीं बाँध रही है अर्थात् इसका यह चेष्टागत प्रयास सभी को अपने पर आसक्त कर ले रहा है। बिहारी द्वारा रचित इस दोहे में नायिका द्वारा जूड़ा बाँधने की चेष्टाओं का वर्णन शब्दों के माध्यम से दृश्यचित्र निर्मित कर देता है। इसी दृश्यचित्र को रंगों से फलक पर उतारने का सफल प्रयास बसोहली शैली के एक चित्रकार ने किया है। इस चित्र में नायिका को उसी मुद्रा में अंकित किया गया है जो कवि बिहारी ने वर्णित की है। उस स्त्री की जूड़ा बाँधने की चेष्टाओं में हाथों को समेटकर, अपने भुजाओं पर शीश के पट को डालकर अपने हाथों से बालों को पकड़कर जूड़ा बाँधने का प्रयास कर रही है। इस नायिका के पास एक अन्य सखी भी है जो उसकी यह चेष्टायें देख रही है। नायिका की ये हृदयगत चेष्टायें जूड़ा बाँधने के क्रम में हर किसी को स्वयं पर आसक्त कर उसके हृदय को भी बाँधने में सफल हो सकती हैं। बिहारी के अन्य दोहे का भी इस चित्र में लिपि अंकन हुआ है पर उसका चित्र से कोई स्पष्ट सम्बन्ध नहीं प्रतीत होता। परम्परागत वेशभूषा, आभूषण, केशसज्जा के साथ शैली अनुरूप प्रभावशाली रंगयोजना का प्रयोग इस चित्र में हुआ है जो बिहारी के उक्त दोहे को चरितार्थ कर देता है।

(9)

"हरि कीजति बिनती यहै तुम सौं बार हजार।

जिहिं तिहिं भाँति डरयौ रह्यो परयौ रहौं दरबार।।"[26]

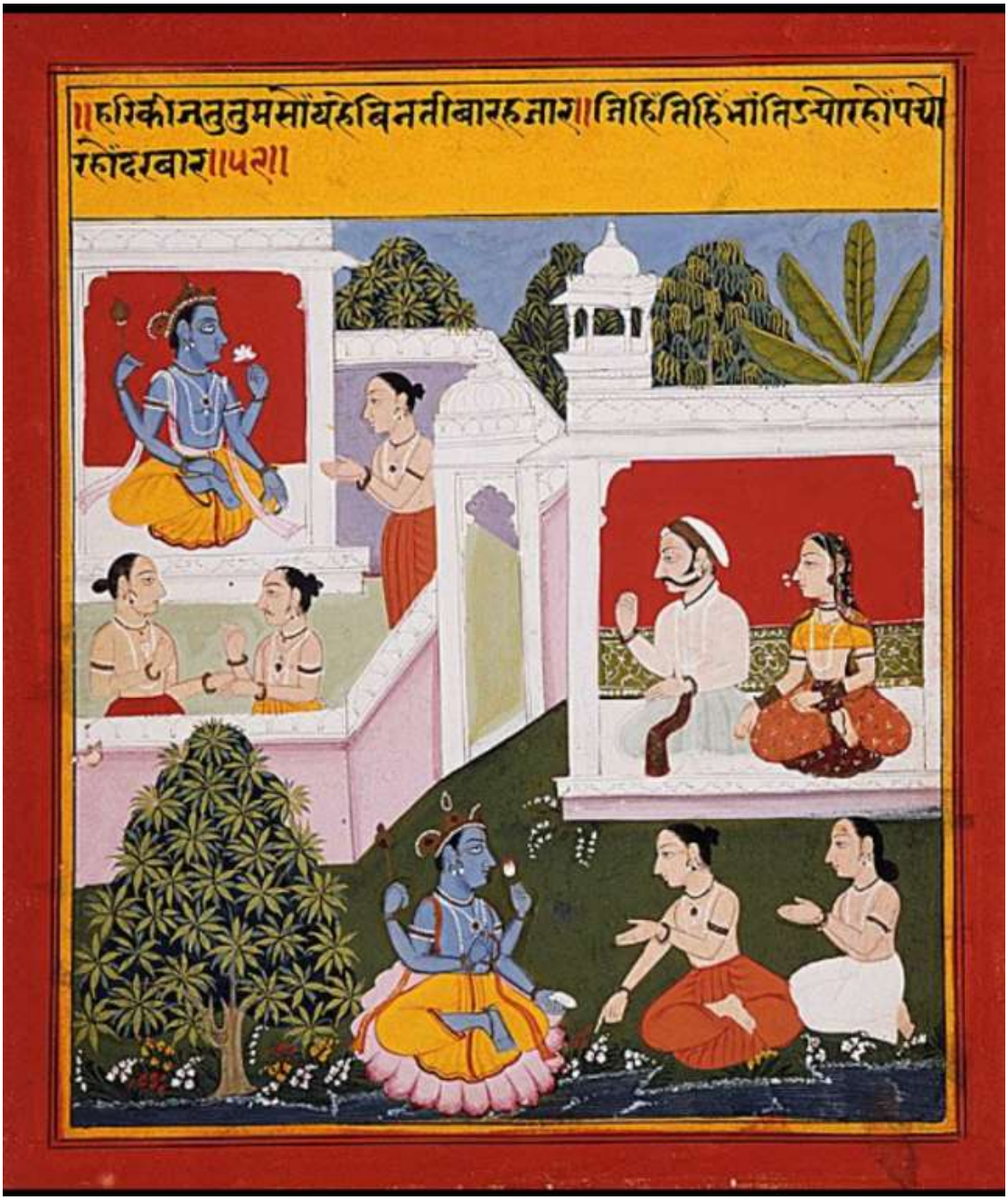

परिशिष्ट : चित्र - 19

भक्ति मार्ग के अनुयायी वैष्णव भक्ति में मुक्ति की कामना कभी नहीं चाहते क्योंकि उनका मनना है कि मुक्ति में कुछ नहीं रखा होता है, जो कुछ है वह तो युगल स्वरुप के सेवा तथा दर्शन भाव में है। सेवा भाव का यह आनंद मुक्ति हो जाने पर प्राप्त नहीं हो सकता। इसलिए इसी सेवा तथा दर्शन सुख के अभिलाषी भक्त की प्रभु से प्रार्थना है- हे हरि, मेरी तुमसे हजार बार बस यही नम्रता पूर्वक विनती है कि अच्छी-बुरी अब जैसी भी दशा हो मेरी, पर मैं आपके दरबार में ही पड़े रहना चाहता हूँ। अर्थात् जिस भी दशा में मुझे रहना हो मैं रह लूँगा पर मैं आपके दरबार से मुक्ति नहीं चाहता, बल्कि आपकी सेवा में ही इस दरबार में लगा रहना चाहता हूँ।

बिहारी द्वारा रचित यह दोहा अभिलाषा से परिपूर्ण है जिसमें भक्त की प्रभु से मुक्ति की कामना से परे उनके ही सेवा में जीवन देने की इच्छा को व्यक्त किया गया है। इस भाव-भक्तिपूर्ण दोहे का राजस्थानी कला की मेवाड़ शैली में चित्रांकन हुआ है। जिसमें भक्त को हरि के सामने हाथ जोड़ कर खड़े इस प्रकार से चित्रित किया गया है कि इस चित्र में दोहे के ये भाव स्वतः ही मस्तिष्क में अपना प्रभाव छोड़ने लगते हैं। रंग-संयोजन में विशेषत: लाल, पीले और नीले रंग के प्रयोग ने भाव को अधिक प्रभावी बना दिया है। चित्र में भक्ति-भाव का पूर्ण संयोजन रंगों तथा चित्रित मानवाकृतियों से हो गया है, इसमें बिहारी के काव्य में उपस्थित शब्दों में चित्रांकन करने की क्षमता का भी प्रमाण मिलता है।

(10)

"कहलाने एकत बसत अहि मयूर, मृग बाघ।

जगतु तपोबन सौ कियौ दीरघ- दाघ-निदाघ।।"[27]

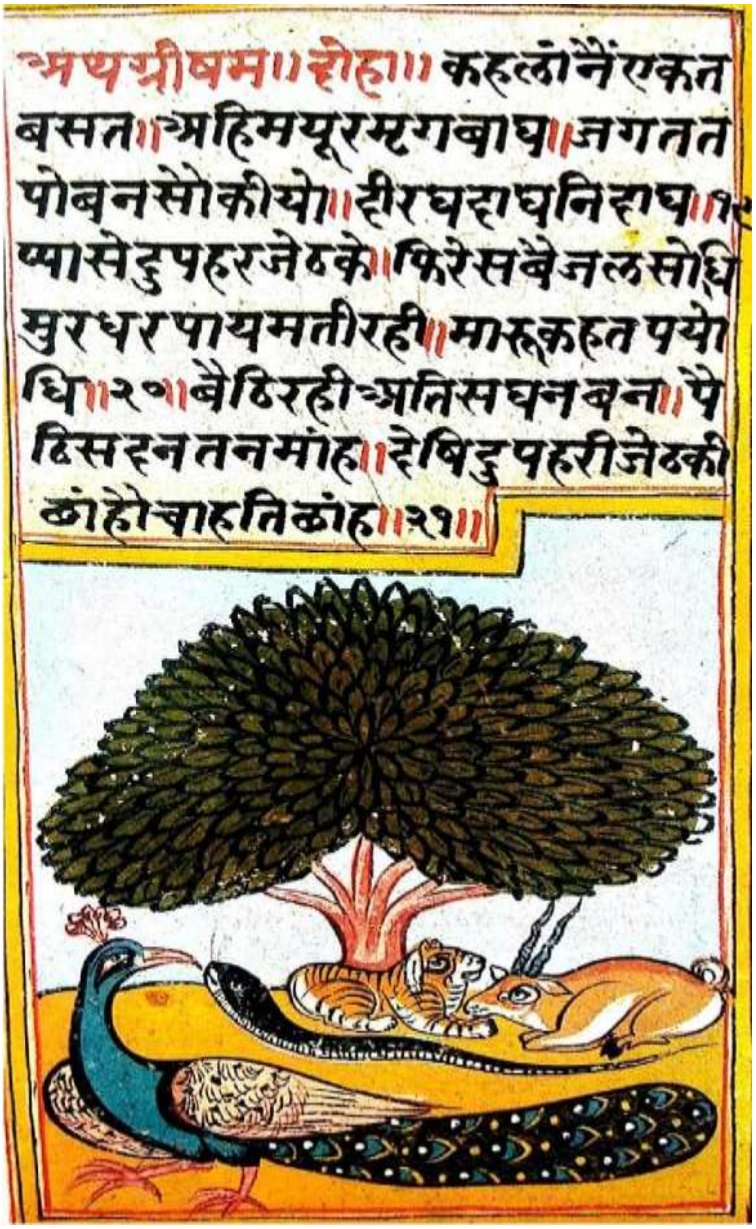

परिशिष्ट : चित्र - 20

यह दोहा विपत्ति के समय बैर-भाव भूलकर एक-साथ रहने का भी भाव प्रेषित करता है। वन के जीवों का परस्पर बैर-भाव भूलकर गर्मी के भीषण और प्रचंड ताप से कातर होकर, एकत्र रहना बिहारी वर्णित करते हैं कि - वन में अहि अर्थात् सर्प, मोर, हिरन तथा बाघ गर्मी से बेहाल और व्याकुल होकर एक साथ एकत्र होकर बस गये हैं। इस प्रचंड ताप वाली ग्रीष्म ऋतु ने तो वन जगत को भी तपस्वियों के वन जैसा बना दिया है, जहाँ मोर और बाघ को यह ध्यान ही नहीं कि सर्प और हिरन हमारे आहार हैं और न ही सांप और मृग में ही उनसे स्वयं को बचाने की शक्ति बाकी है। इस भीषण गर्मी ने तो शत्रुओं को भी एक ही जगह पर बसने के लिए मजबूर कर दिया है। ऐसे ही एक चित्र इस दोहे पर डॉ. श्यामसुंदर दुबे की पुस्तक बिहारी सतसई से मिला है जिसकी शैली अज्ञात है परन्तु देखने से रंगयोजना के कारण यह बसोहली शैली का प्रतीत होता है। इस चित्र में मोर, बाघ, हिरन तथा सांप चारों एक ही वन में एक साथ चित्रित किये गये हैं। इस चित्र में पेड़ के आस-पास इन चारों का इकट्ठा होना ग्रीष्म ऋतु की ओर संकेत करता है। बिहारी के उक्त दोहे में गर्मी की प्रचंडता को भी बहुत ही उत्तम रूप में इस चित्र के द्वारा प्रस्तुत किया गया है। रंगों का उचित संयोजन इस चित्र में दृष्टव्य है जिससे यह तो स्पष्ट है कि बिहारी के काव्य में चित्रांकन की संभावनाएँ शब्दों तक ही सीमित न होकर रंगों तक भी विस्तृत हैं।

(11)

"सोनजुही सी जगमगति अँग अँग जोबन-जोति।

सुरँग, कसुँभी कंचुकी दुरँग देह - दुति होति।।"[28]

परिशिष्ट : चित्र – 21

नायिका की सखी नायिका के शरीर में यौवन की स्वर्ण शोभा का वर्णन करती है कि- उसके अंग-अंग में यौवन की चमक पीले रंग वाली जूही के समान जगमगा रही है। नायिका के इस यौवन का सौन्दर्य इतना है कि उसके कुसुम के फूल से रंगी सुंदर कंचुकी भी नायिका के शरीर की सुनहरी आभा से दुरंगी अर्थात् रक्त और पीत की आभाओं से मिश्रित हो गयी है यहाँ नायिका के यौवन का वर्णन अधिकता लिए है।

बिहारी के उक्त दोहे पर मेवाड़ शैली के चित्र में सखी को कृष्ण के पास बैठे दिखाया गया है जिसमें सखी की मुद्रा उसके कुछ कहने की भंगिमा को सूचित कर रही है। चित्र के ही दूसरे दृश्य में नायिका का उसकी सखियों के साथ बैठे हुए चित्रांकन हुआ है जिससे इन दोनों दृश्यों का एक चित्र में संयोजन होने से बिहारी का यह दोहा इस चित्र में भावानुरूप चरितार्थ हुआ है। चित्र में नायिका के साथ उसकी सखियों की मुद्राएँ नायिका की ओर प्रशंसात्मक हैं तथा चित्र की रंग-योजना मेवाड़ के अन्य चित्रों के समान ही सुंदर है और बिहारी के शब्दचित्रांकन को रंगचित्रांकन में ढाले हुए सुंदर बनी है।

(12)

"खरी लसति गोरैं गरैं, धँसती पान की पीक।

मनौ गुलिबँद-लाल की, लाल, लाल दुति-लीक।।"[29]

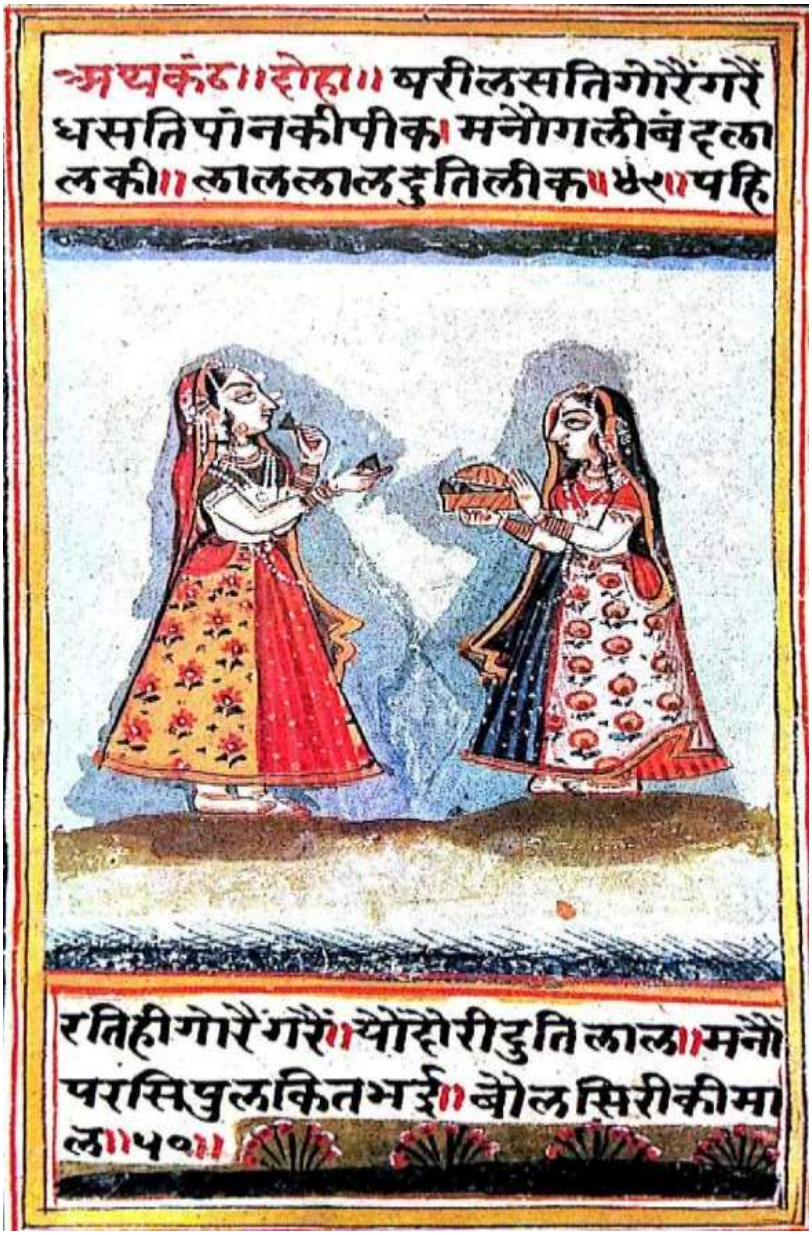

परिशिष्ट : चित्र - 22

बिहारी द्वारा रचित यह दोहा नायिका की सखी द्वारा नायक के समक्ष नायिका की गुराई और अमलता की प्रशंसा कर नायक की रुचि बढ़ाने का भाव प्रदर्शित करता है। सखी नायक से कहती है कि, हे लाल उस नायिका का गौर वर्ण तो इतना अधिक है कि पान खाते समय गले में नीचे उतरती हुई पान की पीक भी उसकी गौर, विमल तथा पतली त्वचा में से झलककर अति शोभा देती है। यह देखकर ऐसा लगता है मानो गले में पहनने वाले आभूषण गुलबंद के लाल माणिक्य की लाल रेखा हो। नायिका का ऐसा गौर वर्ण आश्चर्य में डाल देता है, परन्तु बिहारी के यहाँ होने वाले कुछ अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णनों में से एक यह दोहा भी है। बिहारी की नायिका ही 'इत आवत चली जात उत, चली छः सातक हाथ, चढ़ी हिंडोरे सी रही लगी उसांसन साथ' जैसी हो सकती है।

यहाँ भी नायिका ऐसी ही विशिष्ट है जो कि बसोहली शैली के एक चित्र में भीं चित्रकार द्वारा चित्रित की गयी है। इस चित्र में एक नायिका है जो पान हाथ में लिए खाने की मुद्रा में है तथा उसके गले में पान की पीक की लाली चित्रकार द्वारा बहुत बारीकी से चित्रित की गयी है। नायिका के साथ एक सखी भी है जो हाथ में पान का बक्सा लिए खड़ा है। पान खाने की मुद्रा में लाल ओढ़नी तथा पीले रंग के लहंगे के साथ कोमलांगी नायिका बिहारी की नायिका का प्रतिबिम्ब लगती है। इसी चित्र में नायिका को गले में एक माला धारण किये हुये चित्रित किया गया है जिसके आधार पर चित्रकार ने बिहारी द्वारा रचित एक अन्य दोहे का भी भाव समावेश करने का प्रयास इस चित्र में किया अवश्य है जिसका भावार्थ यह है कि वह नायिका नायक द्वारा भेजी गयी माला को गले में धारण करते ही माला पर नायक के हुए स्पर्श के कारण उसमें सात्विकता उत्पन्न हो गयी। इस सात्विकता में नायिका की आभा में द्युति के दौड़ने से वह स्वयं ही मौलसिरी की माला जैसी हुई जा रही है। परंतु इस चित्र में भी इस दोहे का भाव समावेश चित्र से पूर्ण रूप से संबंधित नहीं प्रतीत होता। पीले रंग के हाशिये के चित्र

में नीले तथा लाल रंग का सफ़ेद रंग के साथ मिश्रण रंग संयोजन को प्रभावशाली बना रहा है। बिहारी के दोहे पर बनने वाले चित्रों में से एक यह चित्र भी बिहारी की चित्रांकन क्षमता का प्रमाण है।

(13)

"सीस-मुकुट, कटि-काछनी, कर-मुरली, उर-माल।

इहिं बानक मो मन सदा बसौ, बिहारी लाल।।"[30]

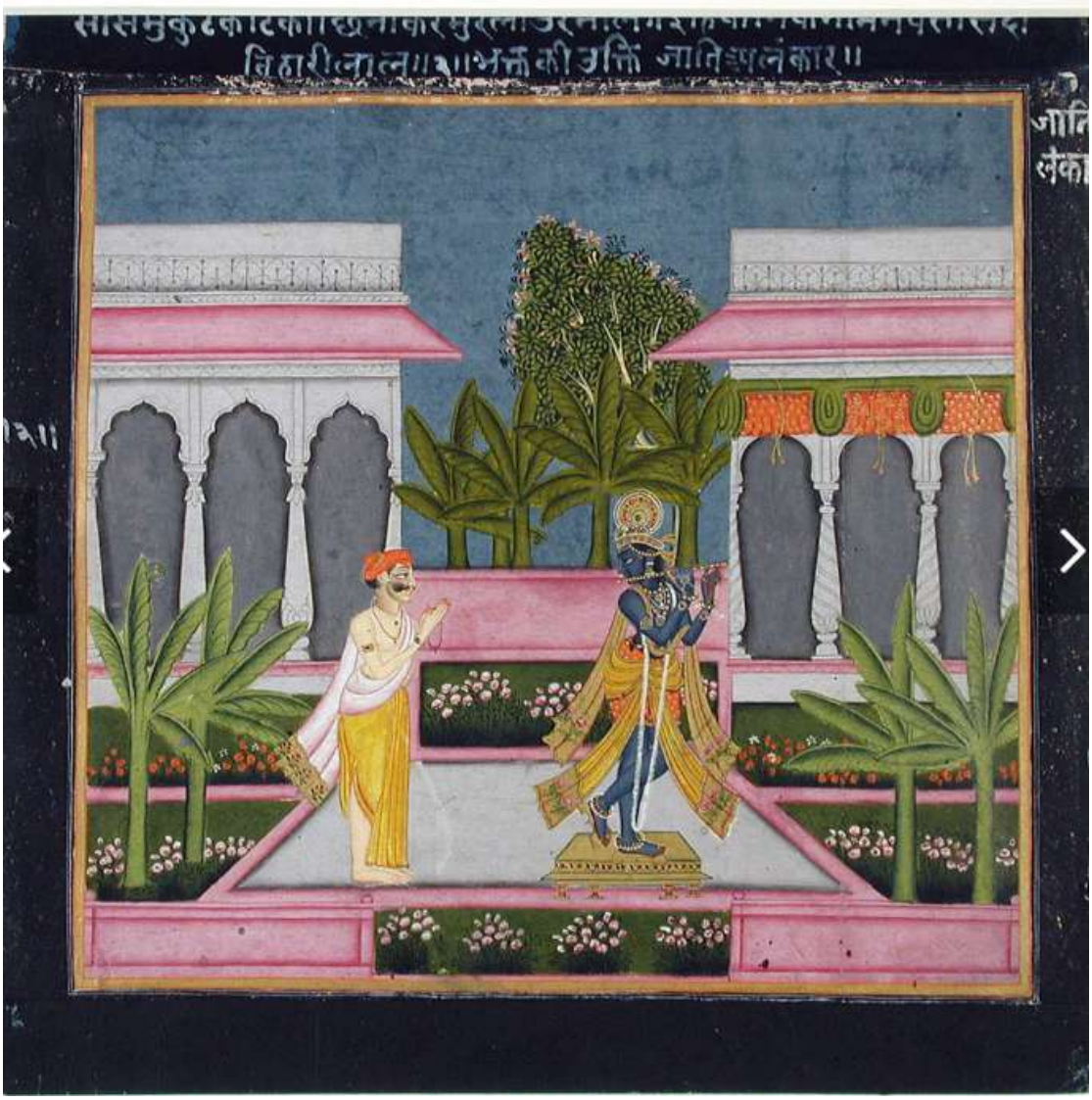

परिशिष्ट : चित्र -23

इस दोहे में कवि बिहारी द्वारा श्रीकृष्ण से अपने ह्रदय में सदा गोपाल रूप में बसे रहने की प्रार्थना की गयी है। बिहारी को कृष्ण के द्वारिकाधीश रूप से कोई प्रयोजन नहीं है, वे तो कृष्ण के गोप वेष के उपासक हैं। तभी बिहारी कृष्ण को उस गोप रूप में ही अपने ह्रदय में बसने की प्रार्थना करते हुए कहते है कि, हे कृष्ण, आनंद क्रीड़ा करने वाले बिहारी लाल, आप मेरे ह्रदय में ऐसे रूप में बसियें जिसमें आपके शीश पर मुकुट, कमर पर काछनी अर्थात् करधनी, हाथ में मुरली तथा गले में वनमाला सुशोभित हो। अर्थात् मैं तो आपके वैजंती माल से परे आपके वनमाला को धारण किये हुए गोप वेश का उपासक हूँ और उसी रूप में आपको अपने ह्रदय में बसाये रखना चाहता हूँ। अतः आप मेरे ह्रदय में अपने इसी गोपाल रूप में सदा बने रहें।

इस दोहे का एक अन्य अर्थ दूधनाथ सिंह जी भी करते हैं, " बिहारी लाल एक ओर तो कवि का नाम है, दूसरी ओर श्रृंगारपरक अर्थ में नायिका कहती है कि हे लाल! (लाल शब्द के तीन अर्थ हैं- पहला प्रिय, दूसरा लाल रत्न की भाँती बहुमूल्य, तीसरा अनुराग से भरे) तुम बिहारी हो, विहार करने वाले हो, एक स्थान पर कभी रुकते नहीं हो, इधर-उधर क्रीड़ा करते फिरते हो, सो अपना यह बिहारीपन छोड़ दो अन्यथा बदनाम हो जाओगे, यदि विहार करना ही है तो मेरे मन में ही विहार करो। इससे तुम्हे भी सुख मिलेगा और निन्दा से भी बच जाओगे।"[31]

बिहारी द्वारा अपनी प्रार्थना में कृष्ण का जो गोपाल रूप उकेरा गया है। वह रंगों के माध्यम से दर्शनीय बन गया है। भक्ति- भाव का यह सुंदर चित्रण भावाभिव्यन्जना के साथ एक म्यूजियम से प्राप्त चित्र में मिलता है। इस चित्र में काले रंग के बॉर्डर के भीतर पूरा दृश्य चित्रित है। जिसमें कवि बिहारी को शीश पर मुकुट, कमर में करधनी तथा हाथों में मुरली के साथ गले

में माला धारण किये श्रीकृष्ण के गोपाल रूप से प्रार्थना करते हुए चित्रित किया गया है। इस चित्र में कवि बिहारी तथा श्रीकृष्ण दोनों की ही मुद्राएँ सुघड़ हैं। बिहारी कृष्ण के समक्ष हाथ जोड़कर विनती की मुद्रा में खड़े हैं जबकि श्रीकृष्ण मुरली बजाने की मुद्रा में चित्रित हैं। चित्र में आस-पास का परिवेश गुलाबी और सफ़ेद रंग से महल के आँगन को सजाया गया है तथा केले के वृक्षों का भी इसमें चित्रण हुआ है। यह चित्र बिहारी के उस पक्ष को उजागर करता है जो कवि बिहारी की चित्रांकन क्षमता को सशंकित समझते हैं।

(14)

"जटित नीलमनि जगमगति सींक सुहाई नाँक।

मनौ अली चंपक-कली बसि रसु लेतु निसाँक।।"[32]

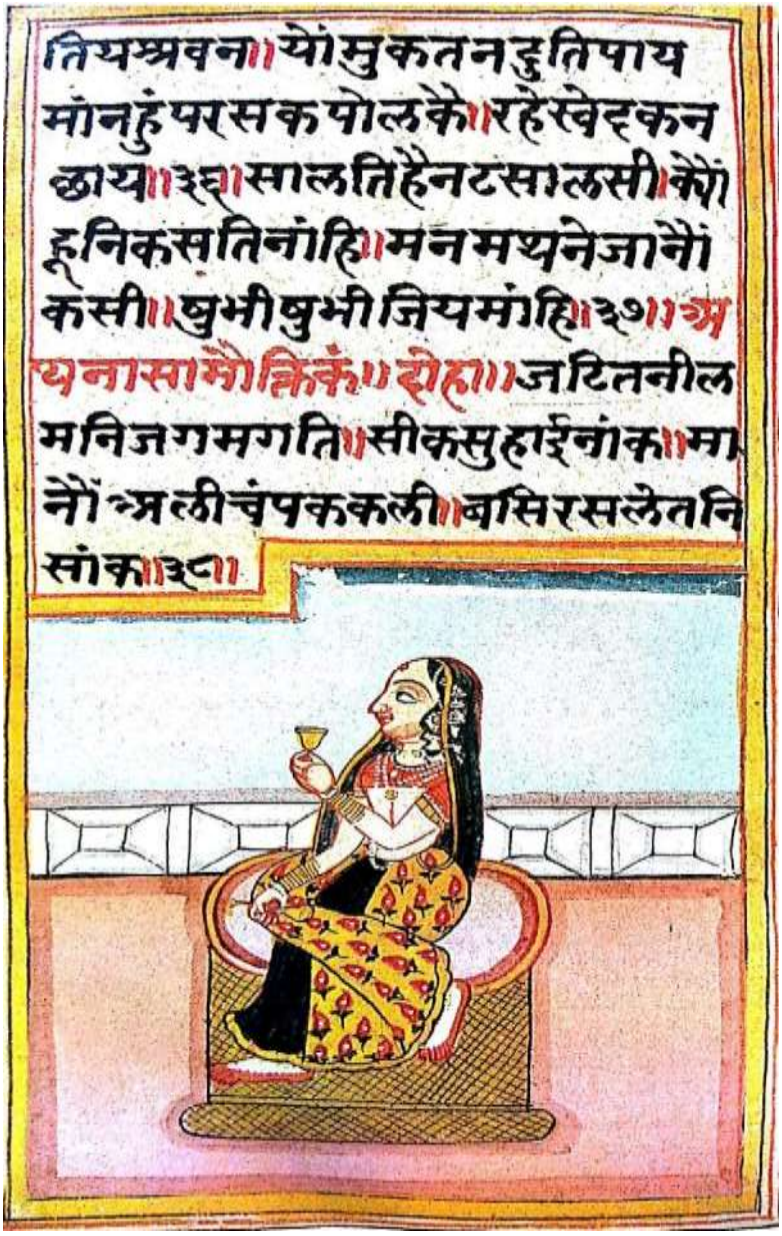

परिशिष्ट : चित्र - 24

यह कथन नायक का स्वगत है जो नायिका के नाक तथा उसमें डली हुई नीलम जड़ी सींक की अपूर्व शोभा का वर्णन कर रहा है। वह विचार करता है कि नायिका की सुंदर सी नाक में नीलम से जड़ी हुई सींक ऐसी जगमगा रही है मानो भँवरा चंपे की कली पर बैठकर निशंक भाव से उसका रस ले रहा हो। भ्रमर उस नासा रुपी चंपे की मनोहर कली पर विचार शून्य होकर ऐसा मुग्ध हो गया है जिसमें वह यह भूल ही गया है कि भ्रमर चंपे की कली पर नहीं बैठता। यह कथन एक ओर जहाँ नायिका की नासिका की चित्ताकर्षक नाक तथा उसमे डली हुई सींक की अपूर्व शोभा का वर्णन है वहीं दूसरी ओर यह शोभा विलक्षण होते हुए भी सामान्य नियम को भुलावा देने वाली है। इस विलक्षण शोभा का चित्रण बसोहली शैली के चित्र में एक चित्रकार ने चित्रांकित किया है। इस चित्र में नायिका एक आसन पर हाथ में रस का पात्र लिए विराजमान है। उसकी मुद्रा आसन पर बैठकर ऐसी है कि उसके नाक में सुहाई नीलमणि रत्न जड़ित सींक भी दिखाई दे रही है। इसी सींक के पीछे के भाव को व्याख्यायित करते हुए इस चित्र में ही बिहारी का उक्त दोहा नागरी लिपि में अंकित है जिससे यह तो स्पष्ट ही है कि उक्त चित्र का आधार बिहारी का यह दोहा है, साथ ही साथ इस सामान्य से चित्र में नायिका का सौन्दर्य तथा चित्र की रंग-योजना इस चित्र को विशेष बनाती है। लाल और पीले रंग का मुख्यतः इस चित्र में प्रयोग दृष्टव्य हुआ है।

(15)

"सालति है नटसाल सी, क्यौं हूँ निकसति नाँहि।

मनमथ-नेजा-नोक सी खुभी खुभी जिय माँहि।।"[33]

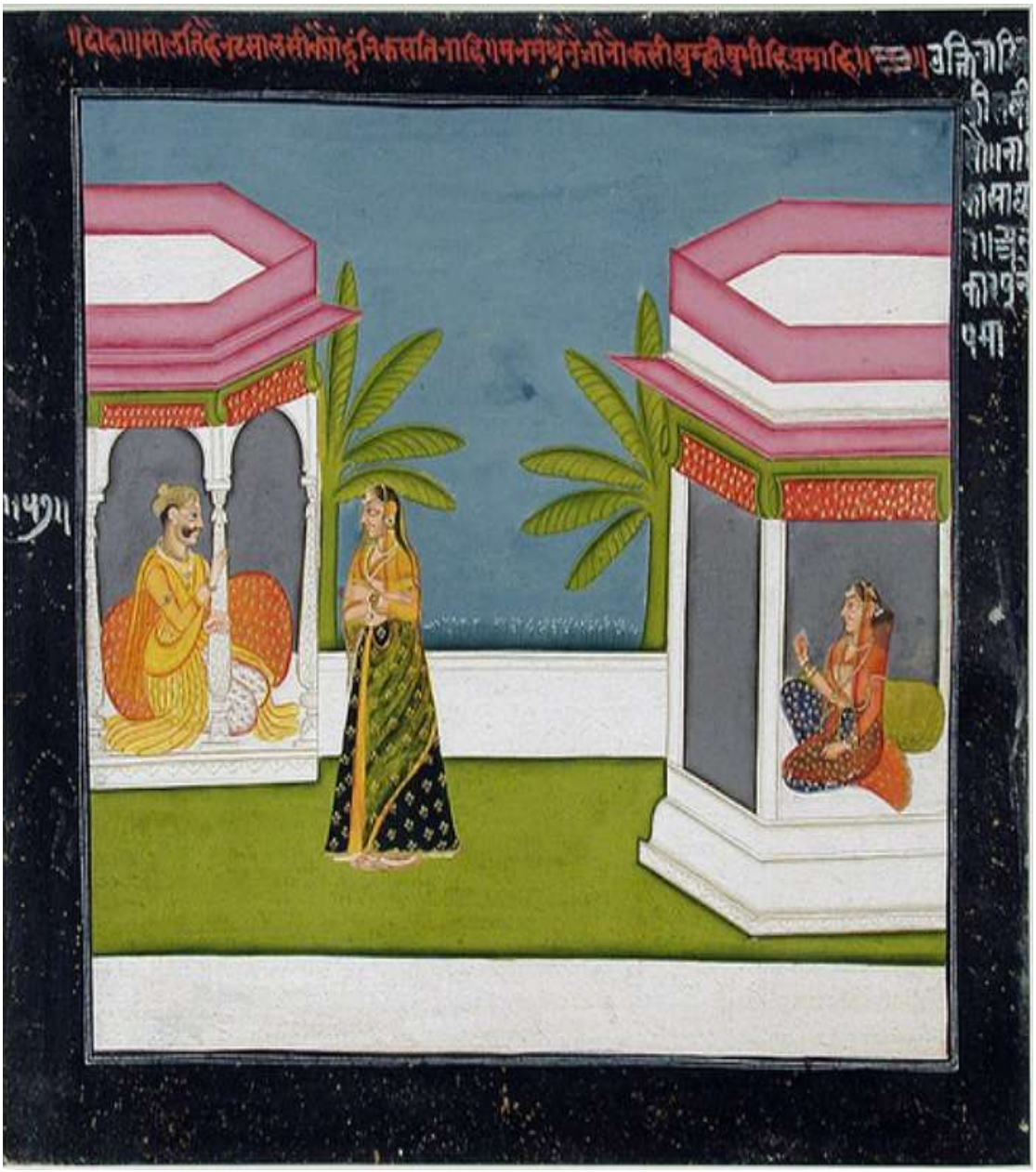

परिशिष्ट : चित्र - 25

बिहारी द्वारा रचित यह दोहा मिलनोत्कंठा के भाव को अपने भीतर समाये हुए है। इस दोहे में नायक अपने ऊपर हुए नायिका के कर्ण आभूषण के प्रभाव को नायिका की सखी को बताता है कि, उसका कामदेव की भाले की नोंक के समान कान का आभूषण मेरे ह्रदय में इस प्रकार से चुभा हुआ है कि वह दिन-रात चुभकर मुझे पीड़ा ही देता है और किसी भी प्रयास से बाहर नहीं निकलता। अर्थात् नायिका के कर्ण-आभूषण मात्र से ही नायक पर प्रेम रुपी बाण इस प्रकार से उसके ह्रदय में धंसा है कि वह न तो किसी भी व्याज से नायिका के प्रेम से बाहर ही निकल पता है बल्कि यह प्रेम दिन-रात उसकी याद दिलाकर नायक के ह्रदय को पीड़ा ही पहुँचाता है।

इस दोहे के भाव पर निर्मित एक चित्र भी प्राप्त हुआ है जिसमें नायिका ने विविध आभूषण के साथ कर्ण-आभूषण भी धारण किया हुआ है। नायिका नायक के सामने से निकल रही है जिसे नायक ने देखा है और उसके कर्ण-आभूषण को देखकर नायक नायिका के उस कर्ण-आभूषण धारित मुख की छवि से निकले प्रेम रुपी बाण से ही घायल हो गया है। यह घायल होना प्रेम का ह्रदय में उठ जाना है जो नायिका के कर्ण-आभूषण के प्रभाव से नायक के मन में उपजा है। इसलिए यह ना तो नायिका की सूरत मन से ही निकाल पा रहा है और न ही उससे मिल ही सकता है। नायिका के मार्ग से गुजरने के बाद उसकी सखी से नायक यह भाव व्यक्त करते हुए भी इस चित्र में चित्रित हुआ है जिसमें इन पात्रों की प्रेम जनित चेष्टायें आकर्षक और सादगी संपन्न हैं।

(16)

"सहज सचिक्कन, स्याम-रुचि, सुचि, सुगंध, सुकुमार।

गनतु न मनु पथु अपथु, लखि बिथुरे सुथरे बार।।"[34]

परिशिष्ट : चित्र - 26

बिहारी के उक्त दोहे में नायिका के बालों पर रीझकर और अपने दैनिक कर्म को भूलकर उन्हीं बालों के ध्यान में नायिका से मिलन की आकांक्षा में मग्न नायक का चित्रण है। जिसे उसके किसी अन्य मित्र द्वारा लोक-लाज और सही-गलत के मार्ग के भेद को समझाये जाने पर नायक उसे उत्तर देता है कि- नायिका के स्वाभाविक और प्राकृतिक रूप से ही चिकने, काले, अमल तथा मनोहर सुगंध वाले कोमल, फैले हुए सुंदर बालों को देखकर मेरा मन इस प्रकार से उस स्त्री पर मोहित हो गया है कि वह अब सही-गलत मार्ग, पथ-अपथ कुछ भी विचार नहीं कर पाता।

यह दोहा बालों के सौन्दर्य को व्यक्त करने वाला है जिसमें स्वाभाविक रूप से चिकने, काले, अमल तथा मनोहर सुगंध वाले फैले कोमल बाल किसी को भी अपनी ओर आकर्षित कर सकते हैं। ऐसा ही आकर्षण बसोहली शैली के एक चित्र में देखकर उत्पन्न होता है जिसमें शैली अनुरूप स्त्री को "सूथन चोली और ऊपर से पेशबाज या ढीला लम्बा घेरदार चोंगा पहने दिखाया गया है"[35] कोमलांगी के हाथ में वीणा तथा साथ में हिरन भी चित्रित किया गया है। इस चित्र में बाल अधिक आकर्षक अवश्य चित्रित हुए हैं परन्तु दर्शनीय कम हैं। शैली की विशेषता के अनुसार क्षितिज को एक पतली नीली पट्टी पर सफ़ेद वक्राकर लाइनों द्वारा बादलों को दिखाया गया है। इस चित्र में इस दोहे की भाव-व्यंजना की पहचान इस चित्र पर अंकित बिहारी का उक्त दोहा ही है जो कि बिहारी सतसई पर बनने वाले चित्रों में से एक है। रंग संयोजन में पीले रंग से हाशिये को, काले रंग से भूमि परछाँही की तरह तथा उस पर पौधों को चित्रित किया गया है।

(17)

"ले चुभकी चलि जाति जित जित जल-केलि-अधीर।

कीजत केसरि - नीर से तित तित के सरि-नीर।।"[36]

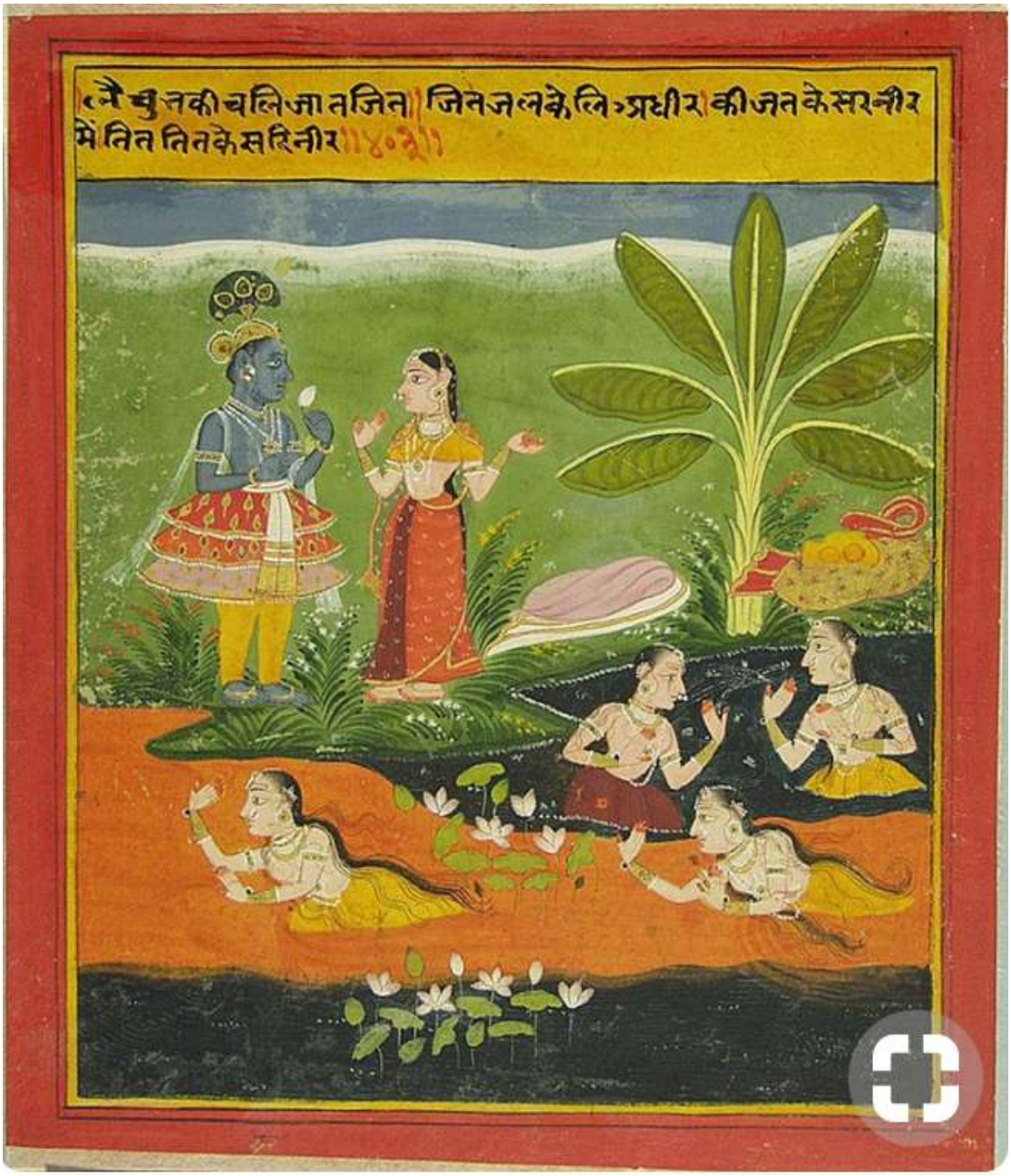

परिशिष्ट : चित्र - 27

बिहारी का यह दोहा रंग-संयोजन का उत्कृष्ट उदाहरण है। इस दोहे में नायिका के गौरे वर्ण की पीत द्युति का वर्णन सखी नायक से करती है और बताती है कि वह नायिका तो ऐसे स्वर्ण के समान गोरे वर्ण वाली है कि जब नदी के जल में केलि करती वह जिस दिशा में भी डुबकी लेकर जाती है, उस ओर से नदी का जल भी उसकी पीत द्युति की आभा से मिलकर केसर घोले हुए जल के समान अर्थात् केसरिया रंग का हो जाता है। कवि बिहारी द्वारा रचित इस दोहे में नायिका के पीत वर्ण की अधिकता है, परन्तु रंग-संयोजन का ज्ञान बिहारी को अवश्य था। डॉ. नगेन्द्र ने बिहारी के रंगों के सूक्ष्म परिज्ञान को देव से तुलना करते हुए लिखा है, "बिहारी और देव दोनों ने अपने चित्रों में वर्ण योजना का अद्भुत चमत्कार दिखाया है। कहीं छाया प्रकाश के मिश्रण द्वारा चित्र में चमक उत्पन्न की गई है, कहीं उपयुक्त पृष्ठभूमि देते हुए एक ही रंग को काफ़ी चटकीला कर दिया गया है, और कहीं अनेक प्रकार के रंगों को सूक्ष्म कौशल से मिलाते हुए उसमें सतरंगी आभा उत्पन्न की गयी है।"[37]

इसी भाव से मेवाड़ शैली में उकेरा गया एक चित्र प्राप्य है जिसमें दो दृश्यों के चित्रण द्वारा इस पूरे दोहे को भाव सहित चित्रांकित किया गया है। यह एक चित्र दोहे के समान एक पूरी घटना को कुछ विशिष्ट रंगों से व्यक्त कर रहा है। इस चित्र में कुछ छरहरी तथा सुंदर से मुख वाली, लम्बी उँगलियों तथा आभूषणों से सुसज्जित स्त्रियों को चित्रित किया है जिनमें एक स्त्री को कृष्ण से कुछ कहते दिखाया गया है। एक स्थान पर नदी में स्नान करती कुछ युवतियों से नदी का आधा जल तो अपने वास्तविक रंग में है, परन्तु नायिका के स्नान तथा केलि के स्थान पर नदी का रंग केसरिया चित्रित किया गया है, इससे स्पष्ट ही इस पूरे दोहे का अर्थ हो जाता है कि राधा की सखी कृष्ण को बता रही है, राधा का गौर वर्ण स्वर्णमयी है जिससे नदी में नहाते समय उसके इस स्वर्णमयी रंग के प्रभाव से नीला रंग भी केसरिया हो जाता है। इस चित्र को देखने पर तथा बिहारी के दोहे से इसके भाव-साम्य के कारण बिहारी के

काव्य की चित्रांकन क्षमता स्वत: स्पष्ट हो जाती है। बिहारी के शब्द चित्रांकन का भाव लेकर चित्रकार ने अपनी कल्पना में लाल, पीले, हरे अलग-अलग रंग की कूचियों से इस चित्र को सजीव कर दिया है।

(18)

"लई सौंह सी सुनन की, तजि मुरली, धुनि आन।

किए रहति नित रातिदिनु कानन-लागे कान।।"[38]

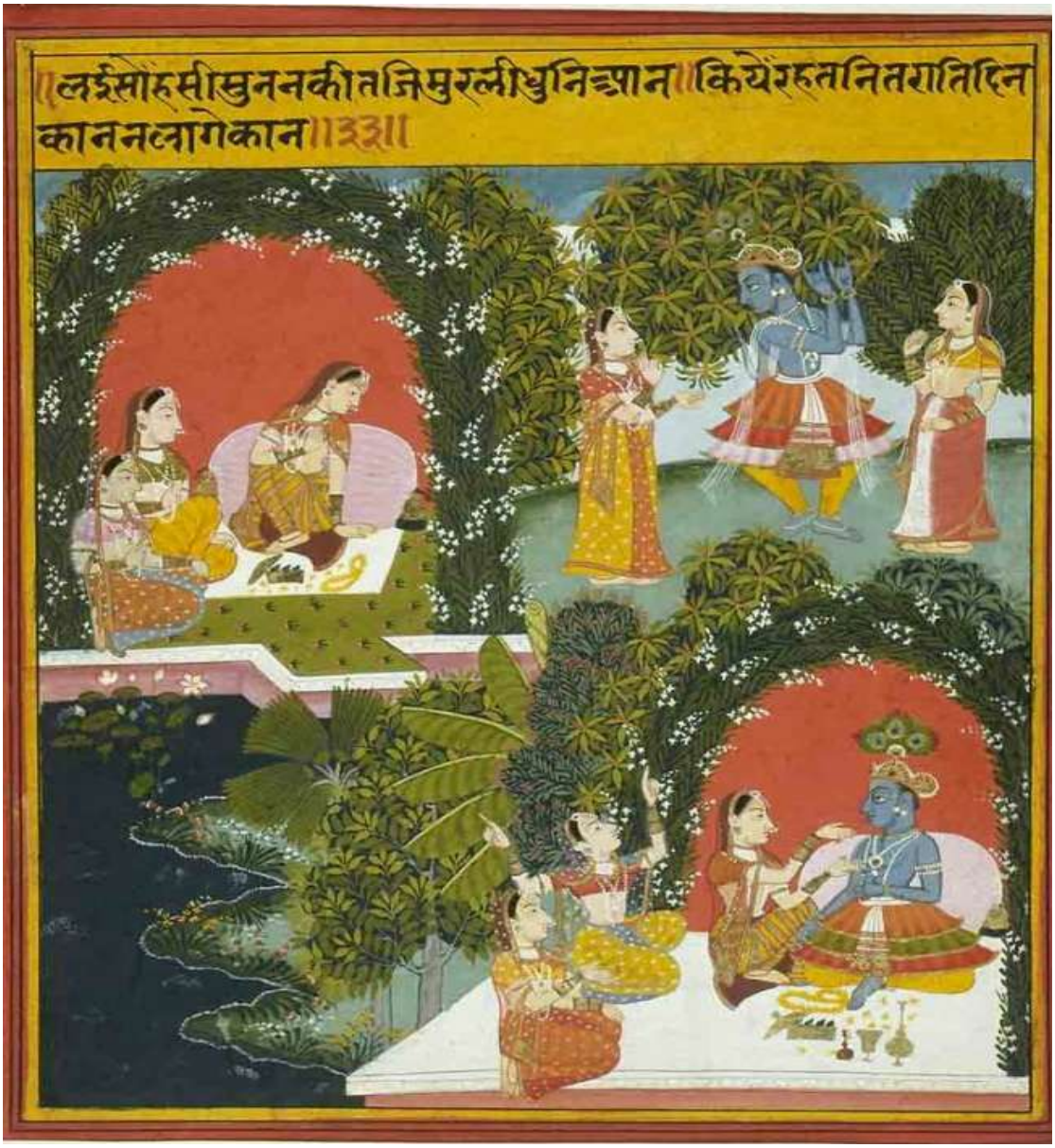

परिशिष्ट : चित्र - 28

बिहारी के दोहों की घटनापूर्ण वर्णन की विशेषता इस दोहे में भी अभिव्यक्त हुई है। बिहारी कृष्ण की बाँसुरी की धुन से राधा के भीतर उत्पन्न अनुराग को उसकी सखी के माध्यम से नायक अर्थात् श्रीकृष्ण के समक्ष व्यक्त करते हैं। राधा की सखी श्रीकृष्ण को बताती है- उसका तुम पर अनुराग तो इस कदर है कि जब से राधा ने आपकी मुरली का मधुर संगीत, उसकी सुमधुर ध्वनि सुन ली है तभी से उसे कोई अन्य ध्वनियाँ सुनाई ही नहीं देती। अर्थात् जैसे राधा ने शपथ सी ली हो कि आपकी मुरली के अलावा कोई अन्य ध्वनि सुननी ही नहीं है। आपके और मुरली के इसी अनुराग के कारण वह दिन-रात नित्य ही अपने कानों को वन की ओर ही इस आशा में लगाये रहती है कि आपकी मुरली की धुन कब सुनाई दे जाये। इस दोहे में राधा की मुरली की धुन को सुनने की चेष्टा सुंदर है जिसे अन्य कोई भी धुन अब सुनाई ही नहीं देती।

इस दोहे पर एक सुंदर चित्र में पूर्ण घटना, कृष्ण का मुरली वादन तथा उसके बाद से राधा की दशा और सखियों द्वारा कृष्ण को यह सन्देश देना सभी कुछ चित्रित हुआ है। इस चित्र में मुरली बजाते हुए श्रीकृष्ण तथा उनके पास उसी धुन को सुनती हुई राधा का चित्रण है। इसी चित्र के दूसरे दृश्य में राधा का मुख इस प्रकार से चित्रित किया गया है कि जैसे कृष्ण की मुरली की धुन की दिशा में राधा के कान धुन सुनने के प्रयास में संलग्न हों। एक अन्य दृश्य में सखियाँ हैं जो अलग-अलग मुद्राओं में अंकित हैं तथा राधा का मुरली के लिए अनुराग को कृष्ण के समक्ष व्यक्त कर रही हैं। इस पूरे एक चित्र में इन तीनों दृश्यों से एक घटना का वर्णन ऐसा ही है जैसे बिहारी ने कुछ शब्दों के माध्यम से दोहे में किया है। इस चित्र में लाल, पीले, हरे, काले तथा नीले रंग का अधिक प्रयोग है। कृष्ण को घेरदार जामा पहने तथा पटका लिए मुरली वादन करने की मुद्रा में चित्रित किया गया है।

(19)

"राधा हरि, हरि राधिका बनि आए संकेत।

दंपति रति-बिपरीत-सुखु सहज सुरतहूँ लेत।।"[39]

परिशिष्ट : चित्र - 29

इस दोहे में कवि बिहारी ने राधा कृष्ण के माध्यम से नायक-नायिका द्वारा उठाये जाने वाले विपरीत रति सुख का वर्णन किया है। राधा ने कृष्ण के तथा कृष्ण ने राधा के वस्त्र धारण कर लिए हैं। इस प्रकार से सहज रतिक्रीड़ा का जो आनंद उठाया वह वेष परिवर्तित होने के कारण विपरीत रति का आनंद हो गया है। इस दोहे में बिहारी इसी प्रसंग का वर्णन करते है कि राधा हरि और हरि राधा का वेश धारण कर मिलन स्थल पर आ गये हैं। यहाँ वह सहज दम्पति, रति सुख में भी विपरीत रति का सुख इस वेशभूषा के परिवर्तन के कारण भोग रहे हैं।

बिहारी ने जो विपरीत रति का चित्र इस दोहे के माध्यम से खींचा है उसे काँगड़ा शैली के एक चित्रकार ने रंगों से उकेर दिया है। इस चित्र में नारी सुलभ कोमलता, लम्बी पतली तथा सुंदर अँगुलियाँ कृष्ण को राधा के वेश में और भी अधिक आकर्षित करती हैं। वहीं कृष्ण का राधा के आभूषणों को धारण करके खंजन नयनों के द्वारा चित्र में प्राकृतिक सुषुमा को भी चित्रकार ने जीवंत बना दिया गया है। आसमान स्वाभाविक नीला चित्रित हुआ है। रंग-संयोजन में हरे, पीले, सफ़ेद और नीले रंग का उत्तम संयोग है जबकि सूर्य का रंग कोई प्रभाव नहीं डाल पाता।

(20)

"भौंहनु त्रासति, मुँह नटति, आँखिनु सौं लपटाति।

ऐंचि छुड़ावति करु, इँची आगैं आवति जाति।।"[40]

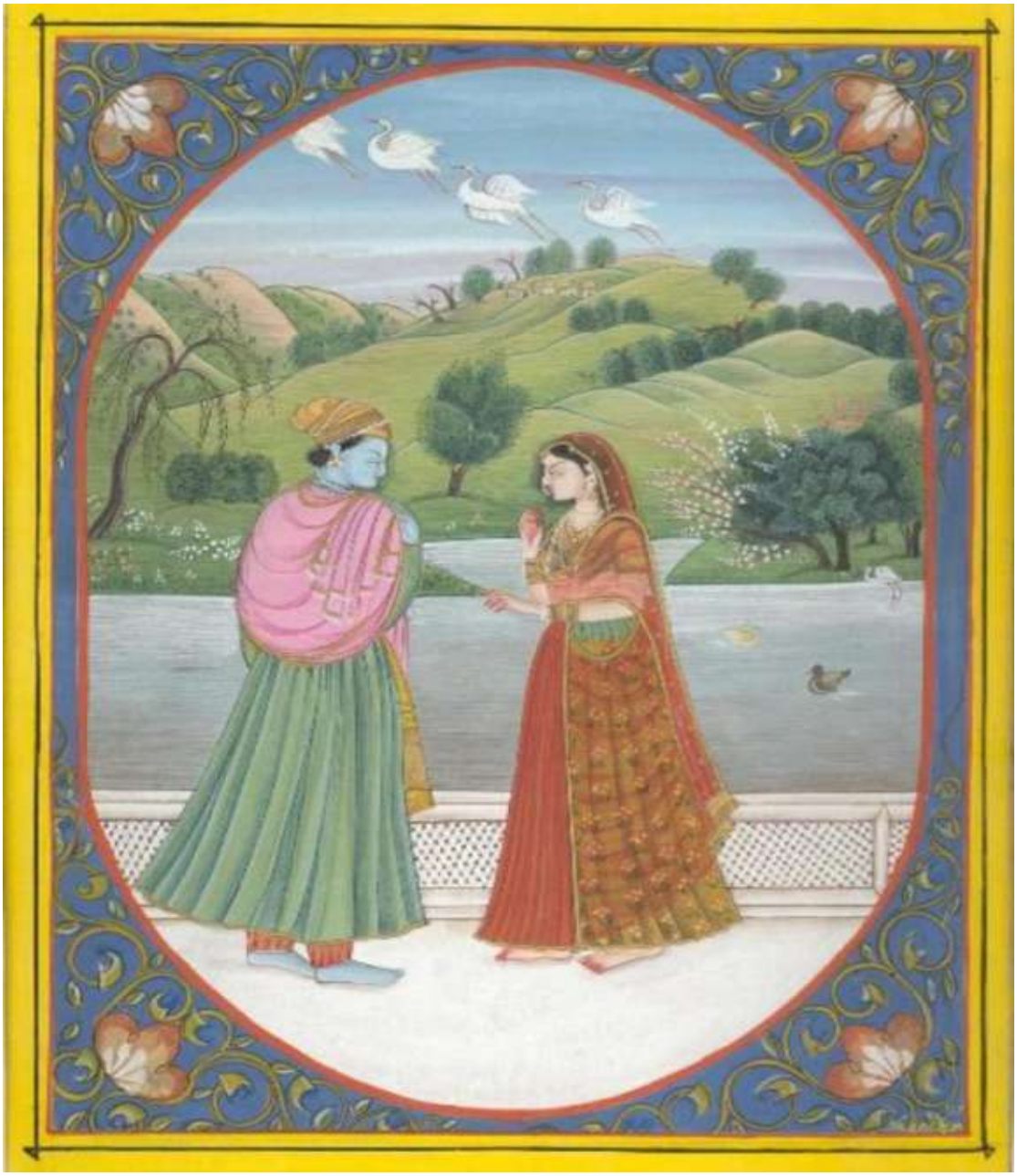

परिशिष्ट : चित्र - 30

इस दोहे में नायिका की क्रियाएं व मुख मुद्राएँ बड़ी चातुरी भरी हैं। नायिका के नायक से प्रथम मिलाप के समय नायक द्वारा हाथ पकड़ने पर नायिका जो चेष्टाएँ कर रही है उसकी प्रशंसा अंतरंग सखी स्वगत करती है - प्रवीण नायिका कितने प्यारे भाव भर रही है। एक ओर तो नायक के हाथ पकड़ने पर उसे भौंह को बनावटी रोष में लाकर यह सूचित करती है कि तुम्हारा मुझे यूँ पकड़ना ठीक नहीं है और मुँह से भी नहीं-नहीं करती है पर आँखों से ऐसे लिपटती चेष्टा करती है जैसे नायक के रूप पर लुभा रही हो। यह चेष्टाएँ यहाँ तक हैं कि खींचकर हाथ को नायक से छुड़ाने का प्रयास करते हुए भी उस खींचातानी में स्वयं ही खिंची हुई सी धीरे-धीरे नायक की ओर आगे आती जाती हो। अर्थात यह तुम्हारा निराला प्रेम है कि इन प्रयासों के बाद भी तुम नायक की ओर समीप होती जा रही हो। डॉ. रवीन्द्रकुमार जैन के शब्दों में, "नायिका की रसभरी चेष्टाओं का अद्वितीय बिम्बविधान किस क्रमिकता और सामासिकता से किया गया है।... यह गागर में सागर ही नहीं बल्कि बिन्दु में सिन्धु ही है।"[41] नायिका की यह प्रेममयी चेष्टाएँ, लोक-लाज और प्रेम के भाव दोनों के द्वन्द के साथ बड़ी मोहक हैं। भौंहों में बनावट, मुख से ना, आँखों से लिपटना और हाथ छुड़ाने का ऐसा प्रयास कि आगे आते जाना, नायिका की इन सभी क्रियागत चेष्टाओं का वर्णन बिहारी ने जिस मनोयोग से किया है उससे एक पूरा दृश्य नेत्रों के समक्ष मानस में निर्मित हो जाता है। इसे पत्र पर उतारने का प्रयास काँगड़ा शैली में हुआ है। 17वीं शताब्दी के इस चित्र में नायक तथा नायिका सरोवर के पास खड़े हैं जहाँ पार्श्व में बगुले, सारस आदि पक्षी आसमान और सरोवर में चित्रित किये गये हैं। वातावरण में पेड़-पौधों और पहाड़ों का चित्रण सुंदर है। नायक सरोवर के पास ही नायिका का हाथ पकडे खड़ा है जिस पर नायक को नायिका भौंहों में बनावटी रोष से ऐसा करने के लिए मना कर रही है, परन्तु उसकी आँखें नायक पर उसके प्रेम में प्रेमाविभोर होकर लिपटती जाती है। नायक के द्वारा पकड़े हाथ को उसकी पकड़ से छुड़ाने का प्रयास

करते हुए दिखाई गयी नायिका उस नायक की ओर ही अपनी शारीरिक असमर्थता दिखा कर बढ़ती जा रही है। चित्र के माध्यम से बिहारी का पूरा भाव-बोध संप्रेषित हो जाता है जो कि बिहारी के शब्द चित्रांकन के कारण ही सरल हो पाया होगा। चित्र की सज्जा में आलेखन युक्त हाशिये का प्रयोग है तथा "स्त्रियों को चोली, लहंगा और पारदर्शी चुन्नी पहनाई गयी है। गले में माला, माथे पर बिंदी, पैरों में पायल, हाथों में चूड़ियाँ तथा अंगूठियाँ आदि पूर्णतया भारतीय परिवेश का द्योतन करती है। पुरुषों को अंगरखा पजामा तथा पगड़ी बाँधे दिखाया गया है। कुछ-कुछ मुग़ल परिधानों की झलक इनके पहनावे में मिलती है।"[42]

(21)

"भाल लाल बेंदी ललन, आखत रहे बिराजि।

इंदुकला कुज मैं बसी मनौ राहु-भय भाजि।।"[43]

परिशिष्ट : चित्र - 31

उक्त दोहा नायिका के माथे पर लगे लाल तिलक तथा अक्षत के सौन्दर्य पर आधारित है। नायिका पूजन से निवृत्त होकर मस्तक पर लाल तिलक जिस पर पूजन के अक्षत भी लगें हैं, उन्हें धारण किये हुए बाहर विराजमान है। उसकी इस शोभा को देखकर सखी नायक के समक्ष उसका वर्णन चन्द्र, राहू और मंगल की उपमा देकर करती है कि, हे ललन! भाल अर्थात् मस्तक पर लगी लाल बिंदी जिस पर अक्षत विराज रहें है, ऐसे लगते हैं मानों चन्द्र की कलाएं राहू के भय से विभक्त होकर, भागकर मंगल में आ बसी हो।

नायिका के इस सौन्दर्य को व्यक्त करता हुआ एक सुंदर चित्र मेवाड़ शैली का है जिसमें सुंदर रंग प्रयोग से उक्त दोहे की सुन्दरता और भी अधिक बढ़ गयी है। चित्र में एक ही साथ दो दृश्यों का चित्रण है जिसके एक दृश्य में नायिका अपने घर के द्वार पर लाल रंग की बिंदी के साथ अक्षत का तिलक लगाकर बैठी है। दूसरे दृश्य में नायिका की दो सखियाँ कृष्ण के समक्ष नायिका के माथे पर सुशोभित लाल बेंदी तथा अक्षत मिले सौन्दर्य का वर्णन करते हुए चित्रित की गयी हैं। एक अन्य छोटे से दृश्य में आकाश में चन्द्र, मंगल तथा राहु का चित्रण है जो सखियों के द्वारा दी गयी उपमा की ओर संकेत है। यह दोहा जिस प्रकार अपनी उत्तम कल्पना से सुंदर बन पड़ा है उसी प्रकार यह चित्र भी सभी मुद्राओं विशेषतः सखी का उस दिशा की ओर हाथ करके संकेत करना जिस दिशा में राहु, चन्द्र और मंगल चित्रित हैं, अप्रतिम बन पड़ा है। मुख्यतः लाल, हरे, नीले, पीले रंगों के साथ केसरिया, गुलाबी तथा सफेद रंग का प्रयोग सुंदर है।

(22)

"भूषन-भारु सँभारिहै क्यौं इहिं तन सुकुमार।

सुधे पाइ न धर परैं सोभा हीं कैं भार।।"[44]

परिशिष्ट : चित्र - 32

बिहारी का यह दोहा दूती की चातुरी और नायिका के शरीर की कोमलता को व्यक्त करता है। बिहारी के दोहे की यह नायिका अपने यौवन तथा रूप के कारण लचकती हुई सी पाँव रखती है जिसकी वजह से दूती को उसका शीघ्र अभिसार करने में बहुत विलम्ब हो रहा है। अतः दूती बड़ी चतुरी से उसके सौकोमार्य की प्रशंसा कर उसको भूषण आदि से सज्जित करने के बखेड़े से बचने के निमित्त नायिका को बड़ी चातुरी से कहती है- इस नवयौवन और कोमल शरीर पर तुम इन गहनों का भार कैसे संभाल पाओगी क्योंकि तुम्हारे यह पैर तो इसी शोभा के भार से ही पृथ्वी पर सीधे नहीं पड़ पा रहे हैं। अतः यह भूषण पहनने की तुम्हें कोई आवश्यकता नहीं है।

ऐसी कोमलांगी नायिका का चित्रण बसोहली शैली में उसकी सखी के साथ एक चित्रकार ने चित्रित किया है। वह नायिका इतनी कोमल और कृश है कि भूषण के भार तो दूर की बात स्वयं के भार से ही लड़खड़ा कर सीधे पाँव नहीं रख पा रही। चित्र में वह सहारे के लिए वृक्ष की डाल को भी पकड़े खड़ी हुई है ताकि संभल सके। जिससे उसकी सखी कहती है कि तुम्हें तो आभूषणों को भी इस कोमल और सुकुमार शरीर पर धारण करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि तुम्हारे पैर तो इस शोभा के ही भार से सीधे नहीं पड़ रहे है। इस चित्र में बिहारी के उक्त भाव, उचित और सुंदर रंग-योजना से आकर्षण बन पड़े है, परन्तु प्रभावशाली उतने नहीं है। नायिका सखी की तुलना में अधिक पतली है परन्तु भूषण उतने ही अधिक नायिका ने धारण भी किये हुए हैं। हाशिये पर प्रयुक्त पीला रंग और पार्श्व में प्रयुक्त हुआ हरा रंग मुख्य रूप से चित्रित है तथा लाल व नीला रंग भी उचित स्थान पर प्रयुक्त होकर सुंदर बन पड़ा है।

(23)

"बिधि, बिधि कौन करै ; टरै नहीं परै हूँ पानु।

चितै कितै त लै धरयौ इतौ इतैं तन मानु।।"[45]

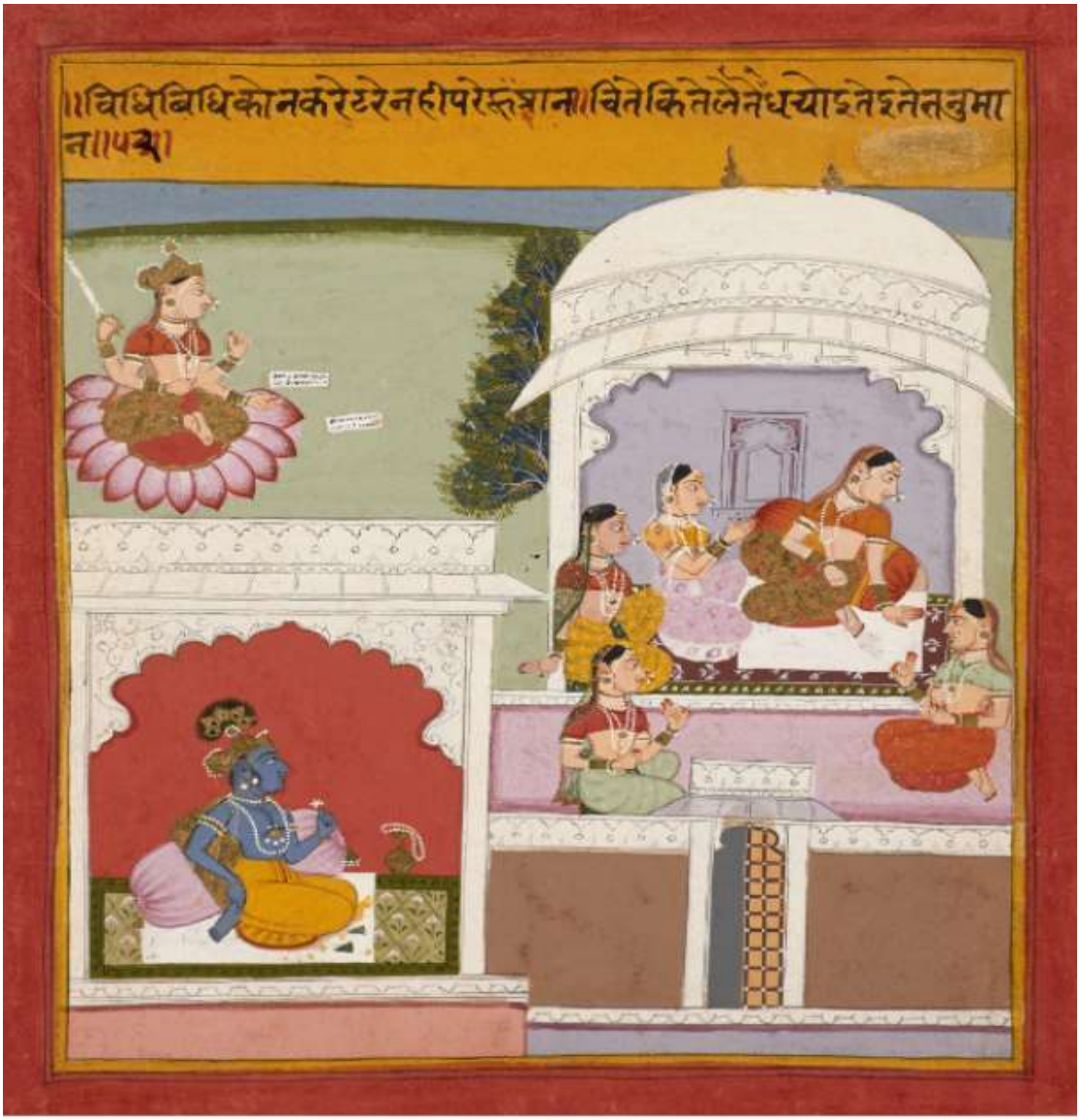

परिशिष्ट : चित्र - 33

यह वचन सखी का मानिनी नायिका से है। जिसमें नायिका को उसकी सखी कहती है कि तेरा मान अर्थात् रूष्टता भी ऐसी है जो कि नायक के पैरों पड़ने पर भी नहीं टलती। हे देव! अब कौन-कौन सी रीति और यत्न कियें जाए कि उसका यह मान अब चला जाये। सखी नायिका से कहती है कि तू थोड़ी देर इधर तो देख और बता की इतना अधिक मान तेरे इतने से शरीर में कैसे समा जाता है अर्थात् इतनी अधिक रुष्टता इतने से शरीर में अच्छी नहीं है। नायक के इतना मनाने पर अब तो मान जा।

इस दोहे में नायिका का मान किये हुए बैठना, कृष्ण का पैरों पड़ना और सखी का समझाना, सभी कुछ शब्दों के माध्यम से बिहारी ने चित्रांकित किया है। इस शब्दचित्र का रंगों में चित्रांकन मेवाड़ शैली में हुआ है। इसमें एक ओर नायिका का मान किये मुख घुमा कर बैठना चित्रित है जिसे कुछ सखियाँ समझाने का प्रयास कर रही हैं और दूसरी ओर दृश्य में नायक का अपने भवन में बैठकर नायिका की मानिनी अवस्था पर विचार करते हुए चित्रांकित हुआ है। इस चित्र में इस तथ्य पर तो प्रकाश नहीं पड़ता कि नायक ने नायिका के पैरों पड़े हों, परन्तु फिर भी नायिका को सखियों द्वारा हाथ जोड़कर समझाने का प्रयास करना उक्त दोहे की निर्मिति पर इस चित्र के आधारित होने की ओर संकेत करता है। चित्र में पीले और हरे तथा सफ़ेद रंग से अधिकतर चित्र को सजाया गया है। कहीं-कहीं गुलाबी रंग का भी इसमें प्रयोग हुआ है।

(24)

"नाक मोरि, नाहीं ककै नारि निहोरैं लेइ।

छुवत ओठ बिय आँगुरिनु बिरी बदन प्यौ देइ।।"[46]

परिशिष्ट : चित्र - 34

इस दोहे के प्रसंगानुसार नायक नायिका को अपने हाथ से पान खिलाता है। उस नायक के हाव तथा नायक की छेड़छाड़ का वर्णन एक सखी अन्य सखी से करती है- नायिका नाक मरोड़ कर तथा नहीं-नहीं करके उपकार करने की प्रार्थना में नायक द्वारा दी जाने वाली पान की बीड़ी मुंह में लेती है, इस बीच प्रियतम मुख में पान देने के साथ ही उसके दोनों ओठों को उँगलियों से छुआ जाता है। कवि बिहारी के इस दोहे में नायिका का गतिशील क्रियात्मक वर्णन है तथा एक पूरा गतिशील दृश्य नायक और नायिका के बीच घटित हुआ है। नायिका का नाक मरोड़ना अर्थात् सिकोड़ना, नहीं-नहीं कहते हुए मान जाना, और अब नायक को उसे पान खिलाने के बहाने ओठों को उँगलियों से छुआ जाना, जैसी विविध क्रियाएँ इस दोहा छंद में बिहारी ने दृश्यात्मक रूप में बाँध दी है।

कवि बिहारी के इसी दृश्य को उद्घाटित करने का प्रयास बसोहली शैली के एक चित्र में हुआ है। इस चित्र में नायक तथा नायिका रूप में कृष्ण-राधा का चित्रण हुआ है, जो आसन पर विराजमान हैं। श्रीकृष्ण राधा के मुख तक पान की बीड़ी देने के निमित्त हाथ ले जाने का प्रयास करते हुए चित्रित हैं जिनके उस हाथ को राधा अपने दायें हाथ से पकड़कर रोकती हुई अर्थात् अपनी असहमति जाहिर करते हुए दृष्टिगत हुई है। कृष्ण-राधा का यह चित्र इसलिए भी आकर्षक है क्योंकि राधा-कृष्ण का चित्रण बसोहली शैली की विशेषता अनुसार अवश्य ही ढालदार माथा, लम्बी नाक, कोमलांगी शरीर के साथ हुआ है, परन्तु इस चित्र में एक आकर्षण है। इनकी चेष्टागत मुद्राएँ हैं जो दर्शक का ध्यान अपनी ओर खींच लेती हैं। बादलों के चित्रण में शैली अनुरूप क्षितिज पर सफ़ेद रंग की वक्राकर लाइनों को एक पतली सी पट्टी पर खींचकर हुआ है। हाशिये पर प्रयुक्त पीला रंग पार्श्व में प्रयुक्त लाल, पीले रंग को अधिक उभारने में भी सफल हुआ है। बिहारी के दोहे पर निर्मित ऐसे ही चित्र उनके काव्य में चित्रों के तथा चित्रों में काव्य के सम्बन्ध को भी स्पष्ट करने में अधिक सफल हुए हैं।

(25)

"बतरस - लालच लाल की मुरली धरी लुकाइ।

सौंह करैं भौंहनु हँसै, दैन कहैं नटि जाइ।।"[47]

परिशिष्ट : चित्र - 35

राधिका जी ने वार्तालाप के आनंद के लोभ में श्रीकृष्ण जी की मुरली छिपा कर रख दी है और उनके भाव-भंगिमाओं व चेष्टाओं के द्वारा वह कृष्ण जी के साथ वाक्य-विनोद करती हैं, जिसका वर्णन एक सखी दूसरी सखी से करती है- बातों के रस के लालच में श्रीकृष्ण की मुरली राधिका जी ने छिपा कर रख दी है जिससे अब इनके बीच वाक्य-विनोद हो रहा है। यह संवाद भी ऐसा है कि उसमें सभी भाव समाहित हैं। इस विनोद में श्रीकृष्ण द्वारा मुरली मांगने पर राधा जी सौंह भरती हैं (मुझे सच में मुरली का ज्ञान नहीं है) और साथ ही साथ में भौंहो में हंस भी देती हैं। जिससे कृष्ण को उन पर संदेह हो जाये और वे निराश होकर अन्यत्र न चले जाएँ। परन्तु कृष्ण द्वारा मुरली देने के लिए कहने पर झट से मुकर जाती हैं कि मुरली मैंने नहीं छिपाई। कवि बिहारी का यह उक्त दोहा राधा की क्रियाओं, भाव-भंगिमाओं पर आधारित चेष्टागत वर्णन है। दूधनाथ सिंह के शब्दों में, "रूप स्वभाव, मनोविज्ञान, भंगिमा सबका वर्णन बिहारी ने इतना चमत्कारिक ढंग से किया है कि उनकी कला की बारीकी और सूझ पर मुग्ध रह जाना पड़ता है।"[48] मुरली छुपाना, सौंह करना, भौंहो में हँसना, और फिर कृष्ण के मुरली मांगने पर दोबारा से मुकर जाना आदि इन सभी भावों से निर्मित एक पूरा चित्र दृश्यमान रूप में इस दोहे का शब्दों के माध्यम से मानस पटल पर बिहारी चित्रित कर देते हैं। इस चित्र को मेवाड़ के एक चित्रकार ने भी फलक पर रंगों से उतारा है। मेवाड़ शैली के इस चित्र में कृष्ण-राधा तथा उन्हें देखकर बात करती कुछ अन्य सखियों का चित्रण है। कृष्ण राधा के सामने मुरली लेने के लिए हाथ फैलाएं हुए चित्रित हुए हैं तथा राधा मुरली को अपने पीछे छिपाते हुए। राधा ने जिन बातों के आनंद के लिए कृष्ण की मुरली को छिपाया था वह अब प्रेम-विनोद में बदल गया है। प्राक्रतिक सुषुमा, पेड़-पौधें, फूल, आसमान अपने प्राकृतिक रंगों से सजे हैं। अन्य स्त्रियों के साथ राधा तथा कृष्ण का चित्रण मेवाड़ शैली के परम्परागत आकृतियों तथा वस्त्राभूषणों से सुसज्जित है जिनमें कोमलता लक्षित होती है। चित्र को

हाशिये की तरफ लाल या केसरिया रंग तथा भीतरी बॉर्डर को पीले रंग से सजाया गया है। इसमें ऊपर की ओर संकेतित अर्थ को बिहारी के उक्त दोहे के शब्दों द्वारा लिखा गया है

(26)

"तूँ रहि हौ हीं, सखि , लखौं; चढ़ी न अटा, बलि, बाल।

सबहिनु बिनु हीं ससि - उदै दीजतु अरघु अकाल।।"[49]

परिशिष्ट : चित्र - 36

नायिका ने चतुर्थी का व्रत रखा है। व्रत की समाप्ति के लिए चन्द्रमा को अर्घ्य देना आवश्यक माना गया है। नायिका चन्द्रमा को देखने बार-बार अटारी पर चढ़ती है, उसकी सखी उसे बार-बार श्रम करने से रोकना चाहती है, किन्तु स्पष्ट कहने पर कि तू निराहार है तो अधिक श्रम से कष्ट तुझे होगा, के उत्तर में वह कह देगी की तू भी तो निराहार है, इसलिए वह उसके रूप की प्रशंसा कर उसे अटारी पर चढ़ने से रोकती है। वह कहती है कि तेरे रूप के कारण जब तू अटारी पर चढ़ेगी तो कहीं सभी स्त्रियाँ तेरे रूप की चमक को चन्द्रमा का प्रकाश समझ अकाल अर्घ्य न दे दें, और तुझे इसका दोष लग जाये। अतः हे नायिका तू अटारी पर मत चढ़।

भावार्थ यह है कि हे सखी! तू यहीं रह, मैं चंद्रमा देख आऊँगी। बाला मैं तेरी बलिहारी जाती हूँ, तू अटा पर मत चढ़ क्योंकि तेरे अटा पर चढ़ने से तेरा यह रूप मुख जो चंद्रमा के समान प्रकाशमान है , उसे चन्द्रमा समझने के भ्रम में कुछ स्त्रियाँ बिना चन्द्रमा के ही चंद्रोदय होना समझ अकाल अर्घ्य दे देंगी और इसका दोष भी तुझे ही लग जायेगा। इस दोहे में नायिका के रूप सौन्दर्य के वर्णन से सखी द्वारा उसे रोकने की चेष्टा और चातुर्य प्रशंसनीय है।

इस दोहे पर प्राप्त एक चित्र में नायिका चन्द्रमा देखने के निमित्त अटारी पर चढ़ने के लिए पैर आगे बढ़ाये हुए है, जिसे उसके कंधे पर हाथ रखकर रोकने का प्रयास पीछे से उसकी सखी करती है। सखी का वह हाथ अपने कंधे से हटाने की चेष्टा भी नायिका करते हुए इस चित्र में चित्रित हुई है। नायिका तथा उसकी सखी का यह चेष्टागत वर्णन बिहारी के यहाँ सौन्दर्य के रूप में अधिक मुखर हुआ था, परन्तु इस चित्र में चेष्टाओं की मधुरता में यह दोहा अधिक सुंदर तरीके से फलक पर उतरा है। चित्र में पारदर्शी आँचल के साथ पीले और नीले रंग के लहंगे में इन स्त्रियों की चेष्टायें सुंदर बन पड़ी हैं। अटारी का दृश्य तथा रंग-योजना भी इस

चित्र में प्रभावशाली है, जिसे अँधेरी रात तथा उसमे मुखचन्द्र की चमक से हल्की छिटकती चांदनी के जैसे सुंदर रंगों से उभारा गया है। बिहारी का शब्दचित्रांकन यहाँ रंगचित्रांकन से कहीं अधिक आकर्षित और उत्तेजित करता है।

(27)

"तिय, कित कमनैती पढ़ी, बिनु जिहि भौंह-कमान।

चलचित- बेझैं चुकति नहिं बंकबिलोकनि- बान।।"[50]

परिशिष्ट : चित्र - 37

नायक नायिका की तिरछी चितवन से घायल है अर्थात् उसकी नजरों से उसके प्रेम-पाश में बंध गया है। अतः अवसर पाकर नायिका से कहता है- हे स्त्री! तूने यह विलक्षण धनुर्विद्या कहाँ से पढ़ी है। यद्यपि बिना ज्या की कमान काम नहीं देती पर तेरी भौंह बिना ज्या (कमान की डोर) के ही कमान से काम लेती है; तिरछा बाण भी ठीक लक्ष्य पर नहीं पहुँचता पर तेरी यह तिरछी चितवन बाण का पूरा काम कर देती है। चंचल लक्ष्य पर निशाना लगाना आसान नहीं है, पर उस चंचल पदार्थ रुपी चित्त को भी तेरी यह चितवन भौंह रुपी कमान से निकलकर बेध देती है अर्थात् तेरी यह धनुर्विद्या बिना ज्या के भौंह रुपी कमान की तिरछी चितवन के बाण चंचल चित्त के लक्ष्य से भी नहीं चूकते हैं। भौंहों को कमान तथा चितवन को बाण कहकर यहाँ बिहारी अलग ही विलक्षण सौन्दर्य पैदा कर देते हैं। जिससे प्रेमी स्त्री के प्रेम पाश में बंधने पर विवश हो जाता है, उसका ह्रदय उस चितवन रुपी बाण से घायल हो जाता है।

यही भाव संप्रेषित करता एक चित्र प्राप्य है जिसमें श्रीकृष्ण तथा राधा नायक-नायिका के रूप में चित्रित हैं। श्रीकृष्ण बसोहली शैली में निर्मित होने वाले विशेष वृक्ष के सहारे खड़े होकर नायिका की और देख रहें हैं तथा नायिका रुपी राधा कृष्ण की ओर तिरछे नेत्रों से देखते हुए चित्रित की गयी हैं। उक्त दोहे का तिरछी चितवन से घायल करने वाला भाव सहज ही इससे इस चित्र में संप्रेषित हो जाता है। बिहारी के दोहों के ज्ञाता इस चित्र को देखने पर इसके भाव को सहज ही अर्थ में ढाल लेगा , यही इस चित्र की विशेषता है। बिहारी के काव्य की भी यही विशेषता है जिसमें शब्दों से ही ऐसे चित्र खींच देना कि उन पर आधारित चित्रों को पाठक सरलता से समझ और पहचान लेता है। नीले हाशिये के साथ पार्श्व में प्रयुक्त लाल, नीला, हरा और सफ़ेद रंग इस चित्र को दर्शनीय बनाने में सक्षम है।

(28)

"ढोरी लाई सुनन की,कहि गोरी मुसकात।

थोरी थोरी सकुचि सौं भोरी भोरी बात।।"[51]

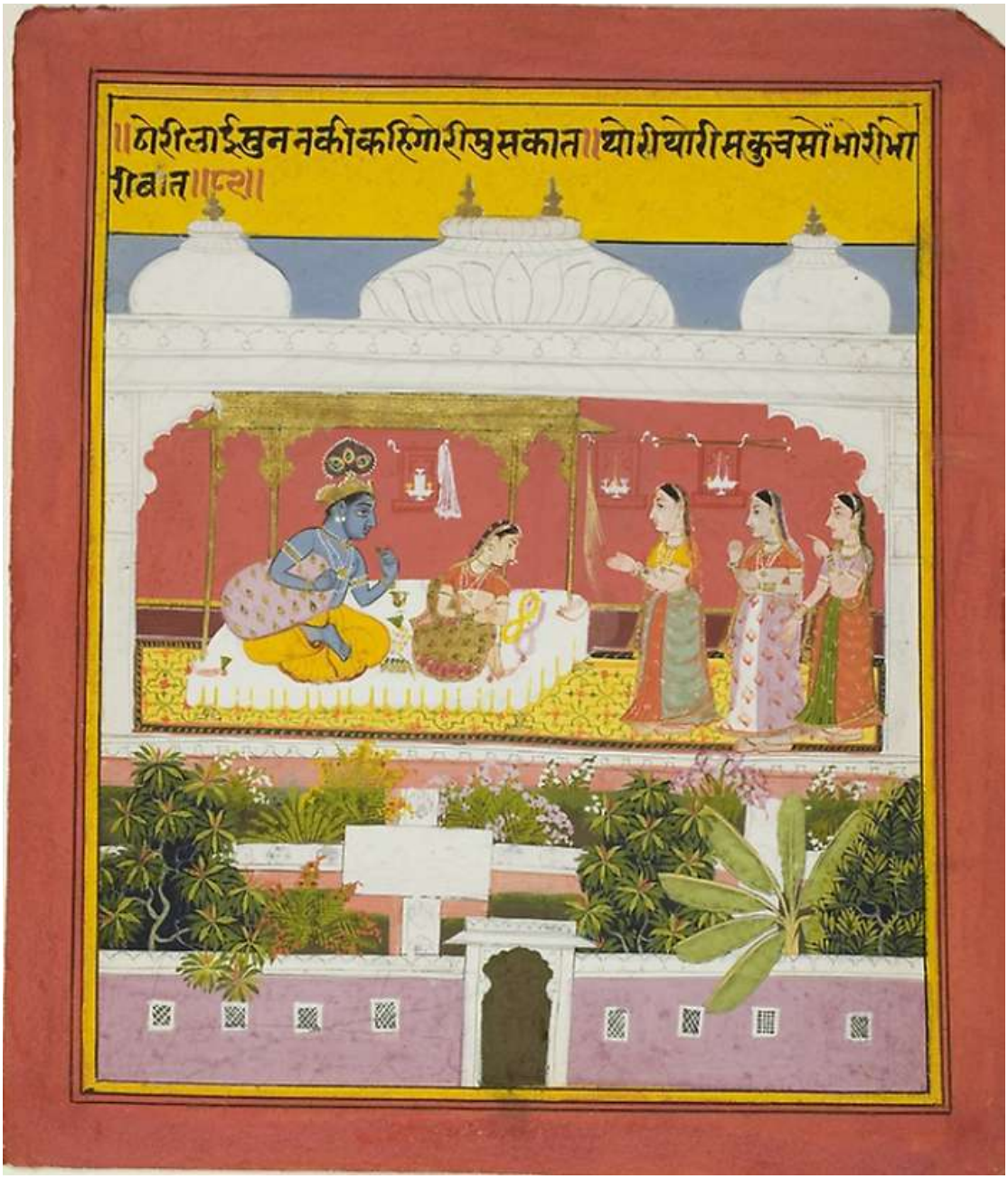

परिशिष्ट : चित्र - 38

नायिका ने नायक को मुस्कुराकर भोली बातें करते सुना है। उससे उसको ऐसा आनंद मिला है कि वैसी ही बातें सुनने की नायक को अब धुन ही लग गयी है। अपनी इसी दशा का वर्णन वह सखी से करता है- उस गोरी ने मुस्कुराते हुए थोड़ा सकुचा कर लज्जा से भोली-भोली बातें कहकर मुझे वैसी ही बातें सुनने की अभिलाषा अर्थात् धुन ही लगा दी है। बिहारी का उक्त दोहा नायक के नायिका के प्रति अनुराग को व्यक्त करता है, जिसमें नायक रुपी कृष्ण नायिका रुपी राधा की लजाकर मुस्काती हुई भोली-भोली बातों पर ही मोहित हो गया है और अब वही सुनने की धुन लगा बैठा है।

इस दोहे पर एक चित्र जो मेवाड़ शैली में परिलक्षित होता है वह उक्त दोहे की गतिशीलता को तो उस रूप में संप्रेषित नहीं कर पाता परन्तु इस अर्थ को जहाँ तक संभव हो सका है संप्रेषित करने का चित्रकार द्वारा किया गया प्रयास अवश्य अच्छा है। इस चित्र में रंग-योजना का सुंदर विधान हुआ है। भवन में राधा-कृष्ण को चित्रित किया गया है जिसमें राधा ने कृष्ण से लज्जावश मुख घुमाया हुआ है और श्रीकृष्ण उसकी ओर देख रहे हैं ताकि उसकी

बातों का रस लें सके। पौधों को प्राकृतिक हरे रंग से चित्रित किया गया है तथा इसमें स्वर्ण का भी प्रयोग मेवाड़ शैली की अन्यतम विशेषता है। राधा- कृष्ण की मुद्राएँ भी इस चित्र में आकर्षक हैं। पार्श्व में प्रयोग किये गये रंग इसे और अधिक सुन्दरता प्रदान करते हैं।

(29)

"चितई ललचौहें चखनु डटी घूँघट-पट माँह।

छल सौं चलि छुवाइ कै छिनकु छबीली छाँह।।"[52]

परिशिष्ट : चित्र - 39

नायक को देखकर नायिका ने जो अनुरागोत्पादक तथा अनुराग व्यंजक चेष्टाएँ की हैं, उसी का वर्णन बिहारी करते हैं। घूँघट के पट के बीच से पहले तो उस नायिका ने डटकर अर्थात् स्थिरतापूर्वक नायक की ओर भली-भाँती ललचाती हुई नजरों से देखा और फिर वह किसी व्याज से छबीली स्त्री नायक को अपनी छाया ही क्षण मात्र के लिए उसके पैरों से छुवाती हुई चली गयी। यहाँ छाया छुआने से यह भाव भी सूचित होता है कि "नायक उसको ऐसा प्रिय लगा कि यद्यपि वह उसको अपना शरीर लज्जावश न छुआ सकी, तथापि छाया ही को उसके शरीर से छुआकर उसने स्पर्शाभास का सुख प्राप्त किया।"[53]

नायिका की यह अनुराग व्यंजक प्रेम भरी चेष्टाएँ काँगड़ा शैली के एक चित्र में व्यक्त हुई हैं। इस चित्र में कृष्ण रुपी नायक तथा नायिका राधा का चित्रण किया गया है जो सभी सभाजनों के सामने लज्जावश अपने प्रेम को स्पष्ट रूप में व्यक्त नहीं कर सकती इसलिए उसे आँचल के पट से कृष्ण की ओर स्थिरतापूर्वक प्रेम भरी नजरों से देखते हुए चित्रित किया गया है। नायक भी नायिका के नेत्रों से नेत्र मिलाकर उसे देखते हुए चित्रित है। जिसमें राधा की परछाँहीं कृष्ण के पैरों के पास बहुत ही हल्की तथा सुंदर रूप से उभारी गयी हैं। काँगड़ा शैली के इस चित्र में नायिका की भंगिमा लज्जापूर्ण प्रेम को व्यक्त करते हुए संकोची भी हैं तथा कृष्ण उत्साहपूर्वक उन्हें निहार रहे हैं। बिहारी के उक्त दोहे पर आधारित चित्र काँगड़ा शैली की सभी विशेषताओं को भी अपने में समाहित किये हुए है, "स्त्री तथा पुरुष दोनों के ही अंगों में यथोचित गोलाई तथा सुडौलता है। स्त्रियों के चेहरे, अंग-भंगिमाओं तथा हस्त-मुद्राओं के बनाने में चित्रकार ने कमाल कर दिया है।... काँगड़ा के चित्रकारों ने नेत्रों को भावपूर्ण तथा उल्लासपूर्ण बनाया है जिससे जीवन की सजीवता परिलक्षित होती है।... कृष्ण के गले में मोतियों की मालाएँ और लंगोटी लगाये या छोटे जांघियों के समान वस्त्र पहने और सर पर गोल टोपी लगाये अंकित किया गया है।"[54] रंग योजना में काँगड़ा के इन चित्रकारों ने,

"अमिश्रित रंग जैसे लाल, पीले तथा नीले रंगों का प्रयोग किया है, जो आज भी उसी प्रकार चमकदार बने हुए हैं। मिश्रित तथा हल्के रंगों में चित्रकार ने गुलाबी, बैंगनी, हरा, फाखताई तथा हल्के नीले रंग का प्रयोग किया है।"[55] यह चित्र बिहारी की चित्रांकन क्षमता को शब्दचित्र से रंगचित्र में बदलकर स्पष्ट रूप में मुखर करता है।

(30)

"बढ़त निकसि कुच-कोर रुचि, कढ़त गौर भुजमूल।

मनु लुटि गौ लौटनु चढ़त, चोंटत ऊँचे फूल।।"[56]

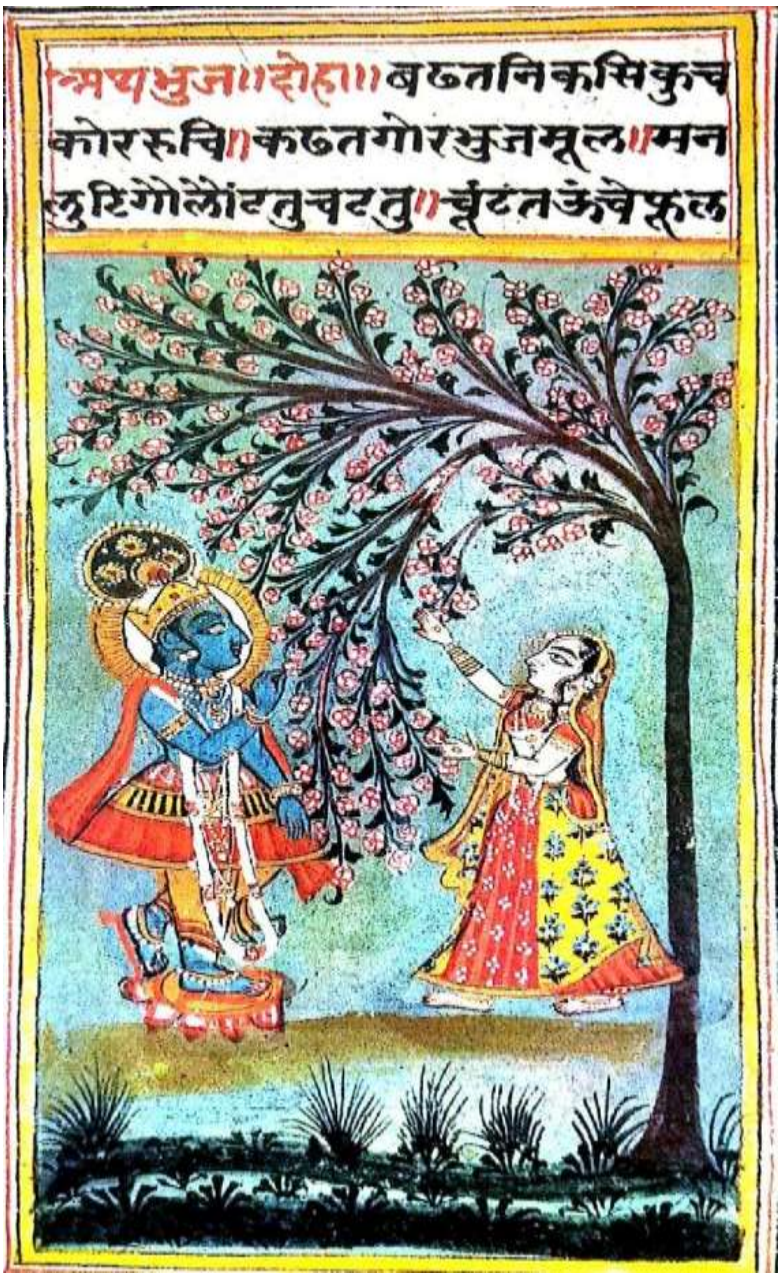

परिशिष्ट : चित्र - 40

नायक ने नायिका को किसी वृक्ष की ऊँची डाल से हाथ ऊँचा कर तथा गर्दन को पीछे की ओर करके फूल तोड़ते देखा। जिससे हाथ ऊँचा करने तथा गर्दन के पीछे की ओर झुकी होने के कारण उसके कुच आगे को निकल गये हैं। ऐसा करने पर उसके आँचल के सरकने से भुजाएँ तथा उदर कुछ उघर गये । इस अवस्था में उसकी त्रिबली को देखकर नायक का मन उसके वश से बाहर हो रहा है। अपनी इसी व्यथा को वह व्यंजित करते हुए मिलने की उत्कंठा व्यक्त करता है - उसके (नायिका) द्वारा ऊँचे फूलों को तोड़ते समय उसके उभरकर आये वक्ष की कोरो की शोभा तथा गोर-गोर भुजमूलों और उदर के उघड़ने से मेरा मन मानो उस उदर की बालियों को चढ़ते हुए देखकर लुट सा गया है। अर्थात् उसके रूप- सौन्दर्य से मेरा मन मेरे वश से बाहर होकर लुट चुका है।

यह भाव व्यंजित करता यह दोहा चित्रांकन की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि नायिका की क्रियाएँ और फूल तोड़ने का प्रयास करते हुए नायिका की चेष्टाएँ भी इतनी मोहिनी हैं कि नायक उन चेष्टाओं पर मोह जाता है। नायिका के चेष्टागत मोहिनीरूप और नायक के इस पर पड़ने वाले प्रभाव का चित्रण एक अन्य चित्रकार द्वारा रंगों के माध्यम से किया गया है। इस चित्र में देखने पर इसमें बसोहली शैली के चित्रों की विशेषताओं की झलक मिलती है। विशेष प्रकार से एक पतले से तने पर पूरा पेड़ एक ही दिशा में झुकता हुआ चित्रित किया गया है जिस पर से नायिका फूल तोड़ने का प्रयास कर रही है और नायक रुपी कृष्ण ऐसा करते हुए राधा को देख रहे हैं। इस प्रयास में नायिका ने हाथ को ऊँचा तथा गर्दन को पीछे किये हुए है तथा उसका हाथ ऊँचा करने की वजह से उसका आँचल भी पीछे की ओर हो गया है। जिसके कारण उसके शरीर का अग्र भाग आंचल के पट के हटने से कुछ उघड़ गया है और उसका उदर दृश्यमान हो रहा है। सामने नायक रुपी कृष्ण भी उस नायिका को ऐसे देखकर उसकी इन चेष्टाओं पर मोहित हो रहे हैं। कृष्ण और राधा के रूप में नायक-नायिका का ये प्रेम

व्यवहार चित्र में बहुत ही सुंदर रूप में चित्रित हुआ है। नायक रुपी कृष्ण ने घेरदार जामा, गलमाल, आभूषण, मोरपंखी, मुकुट तथा नायिका रुपी राधा ने माथटीका, कर्णफूल के साथ कई अन्य आभूषणों को भी धारण किया हुआ है। लाल, और पीले रंगों की मिश्रित और अधिक प्रयोग में लाई गई रंग-योजना से बिहारी के दोहे पर निर्मित यह चित्र उत्तम बन पड़ा है।

(31)

"चितवत, जितवत हित हियैं, कियैं तिरीछे नैन।

भीजैं तन दोऊ कँपे क्यों हूँ जप निबरैं ना।।"[57]

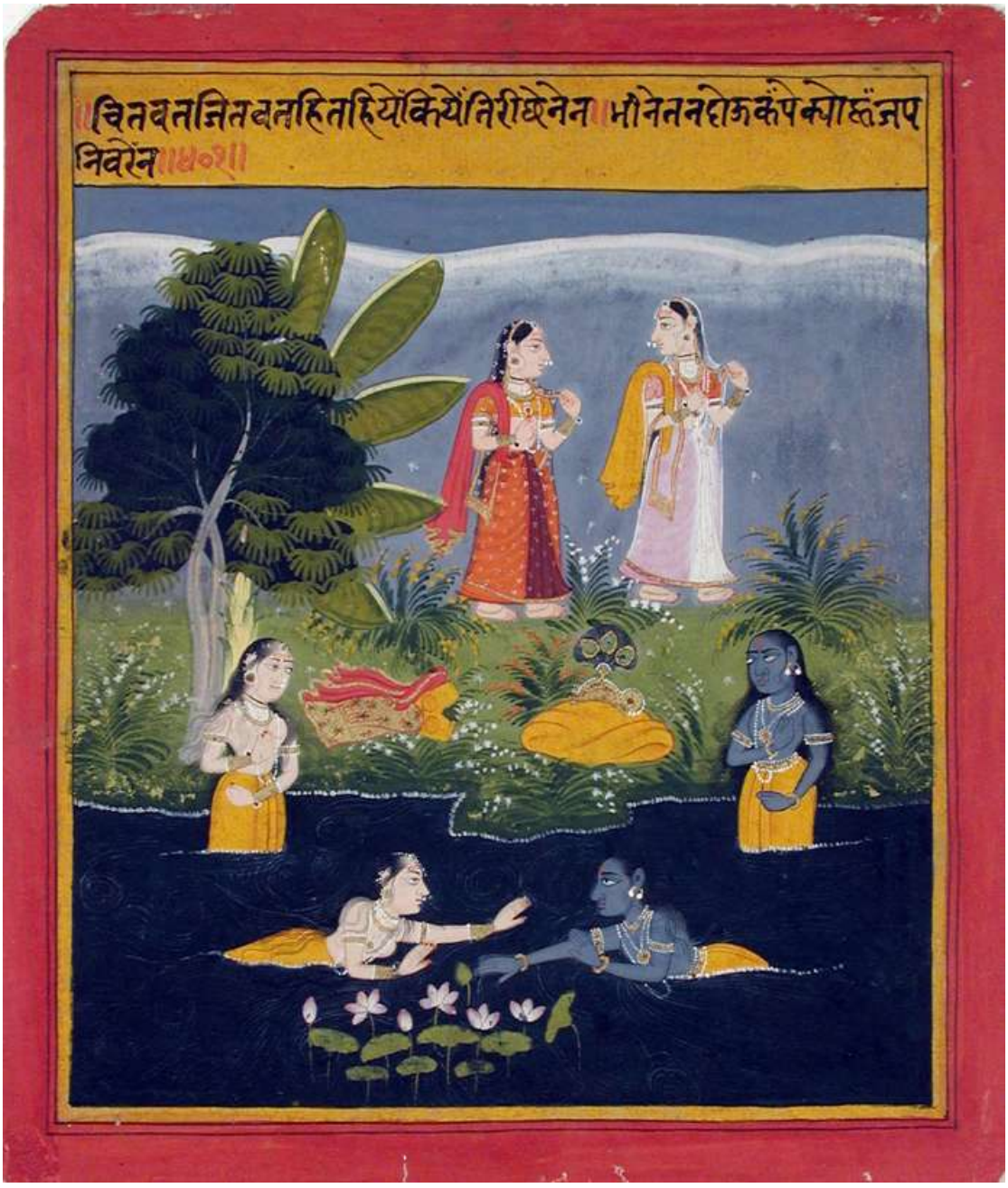

परिशिष्ट : चित्र - 41

इस दोहे के प्रसंग में नायक-नायिका जाड़े के दिनों में जलाशय में स्नान करके, जप करने के उद्देश्य से पानी में ही खड़े होकर तिरछी दृष्टि से परस्पर अपना प्रेम एक-दूसरे पर सूचित कर रहे हैं। इसलिए बहुत अधिक विलम्ब हो जाने पर उनके जप के समाप्त न होने पर सखी का वचन अन्य सखी से है कि- ये दोनों जप करने के बहाने से एक-दूसरे के प्रति हृदय में अपना प्रेम बताते हुए अन्यों की आँखों से आँख बचाकर तिरछे नयनों से परस्पर एक-दूसरे को निहार रहे हैं। ये स्नान कर भीगे तन से ही पानी में खड़े काँप भी रहें हैं, पर इतना समय बीतने पर भी उनका यह कैसा जप है जो कि समाप्त होने का नाम नहीं ले रहा। प्रेम व्यवहार का एक अन्य ही उदाहरण यह दोहा है। जिसमें भक्ति और तप को अपना प्रेम संप्रेषित करने का माध्यम नायक-नायिका अर्थात् कृष्ण-राधा ने बनाया हुआ है। प्रेम में व्यक्ति हर समय बस अपने प्रियतम को देखना चाहता है। उसका मन एकाग्र होकर किसी अन्य काम में लग पाना इतना सरल नहीं होता । यही कारण है कि यहाँ भी जप करने के उद्देश्य से खड़े हुए राधा-कृष्ण भी मन को एकाग्रचित्त न कर जप के बहाने एक-दूसरे को ही तिरछी चितवन से देख रहे हैं।

बिहारी के उक्त दोहे पर मेवाड़ शैली का एक चित्र भी है जिसमें इस दोहे का सम्पूर्ण भाव संप्रेषित हो रहा है। इस चित्र में सुंदर तथा उचित रंग-प्रयोग द्वारा एक तरफ नदी में राधा-कृष्ण को स्नान करते हुए चित्रित किया गया है, दूसरी तरफ राधा-कृष्ण तप करने के व्याज से पानी में खड़े हैं तथा एक-दूसरे को तिरछी नजरों से देख भी रहें हैं। उन्हीं के पीछे नदी के पास से जाती दो स्त्रियाँ आपस में उनके इसी तप के बारे में बात कर रही हैं कि इनका यह कैसा तप है जो इतना समय बीतने पर भी न तो खत्म होने का ही नाम लेता है और न ही इनके यह भीगे तन इन्हें कंपा ही पा रहे हैं जो कि यह दोनों अपने तप से बाहर ही निकलें। बिहारी के इस पूरे गतिशील घटनापरक चित्रण को यह चित्र उसके भाव सहित उत्तम रूप में व्यक्त कर रहा है। नियमानुसार लाल रंग का बाहरी प्रयोग और भीतर की तरफ पीले रंग की चौतरफा लाइन

जिसमें ऊपर पूरे दोहे को अंकित किया गया है तथा मध्य में इस पूरे चित्र के राधा-कृष्ण का सम्पूर्ण प्रेम-भाव, उनकी नेत्रगत चेष्टा, उनकी तप के निमित्त बनाई गयी मुद्रायें तथा स्त्रियों का स्वाभाविक मुद्रा में उनकी बात करना अत्यधिक सुंदर तथा सजीव हो गया है जो बिहारी के दोहे की सजीवता को रंगों के माध्यम से पूर्ण रूप में प्रदर्शित कर रहा है।

(32)

"तजि तीरथ, हरि - राधिका- तन- दुति करि अनुरागु।

जिहिं ब्रज-केलि-निकुंज-मग पग पग होत प्रयागु।।"[58]

परिशिष्ट : चित्र - 42

इस दोहे में कवि बिहारी तीर्थाटन के श्रम को तजकर श्रीकृष्ण और राधा के तन की कांति में अपने अनुराग को लगाकर प्रयाग का सा तीर्थाटन का फल लेने की बात करते हैं। भावार्थ यह है कि, तू तीर्थों को त्याग कर श्रीकृष्ण और राधिका की शरीर की कांति में अपने अनुराग को लगा क्योंकि इससे ब्रज के विहार-वनों के मार्ग में पग-पग पर तुझे प्रयाग जैसे तीर्थराज के भ्रमण का फल मिलेगा अर्थात् इस भक्ति में श्रीकृष्ण के श्यामल और रधिका के गौर वर्ण से एक ओर गंगा-जमुना का फल होगा और वहीं इनमें अनुराग लगने से इनके संगम से सरस्वती के संगम का फल भी होगा। इसी कारण राधिका और कृष्ण के प्रति अनुराग करने से ब्रज के कुंजों में भी प्रत्येक पग पर तुझे किसी एक तीर्थ का नहीं बल्कि प्रयागराज का फल प्राप्त होगा और साथ ही तीर्थाटन का श्रम भी नहीं करना होगा।

बिहारी का उक्त दोहा भक्तिपरक बाह्याडम्बर से परे ध्यान और नामस्मरण पर बल देता है जिसे एक चित्रकार ने एक चित्र में उतारा है। इस चित्र में दो सामान्यजन यही बात करने की मुद्रा में चित्रित हुए हैं। श्रीकृष्ण और राधा को चित्रित कर चित्रकार ने राधा और कृष्ण में ही अपने अनुराग को लगाने का भाव सम्प्रेषित किया है। यह भावपूर्ण वार्तालाप और राधा कृष्ण ब्रज के केलि कुंज के मार्ग में चित्रित किये गये हैं जिससे यह भाव भी सहज ही ज्ञात हो जाता है कि ब्रज के केलि-निकुंज में राधा कृष्ण के प्रति अनुराग भाव से भरे होने पर पग-पग में प्रयाग की अनुभूति होगी। ब्रज और निकुंज के वर्णन के लिए ब्रजगायों और वन का भी चित्रण इस चित्र में किया गया है। चित्र की रंगयोजना बहुत ही सुंदर है तथा वेशभूषा का भी उचित प्रयोग चित्रकार ने किया है। राधा कृष्ण के वस्त्र अभिजातपूर्ण तथा ब्रज के ग्रामवासियों का चित्रण साधारण ग्वाल वस्त्र में किया गया है।

(33)

"देह दुलहिया की बढ़ै ज्यौ ज्यौ जोबन -जोति।

त्यौं त्यौं लखि सौत्यैं सबैं बदन मलिन दुति होती।।"[59]

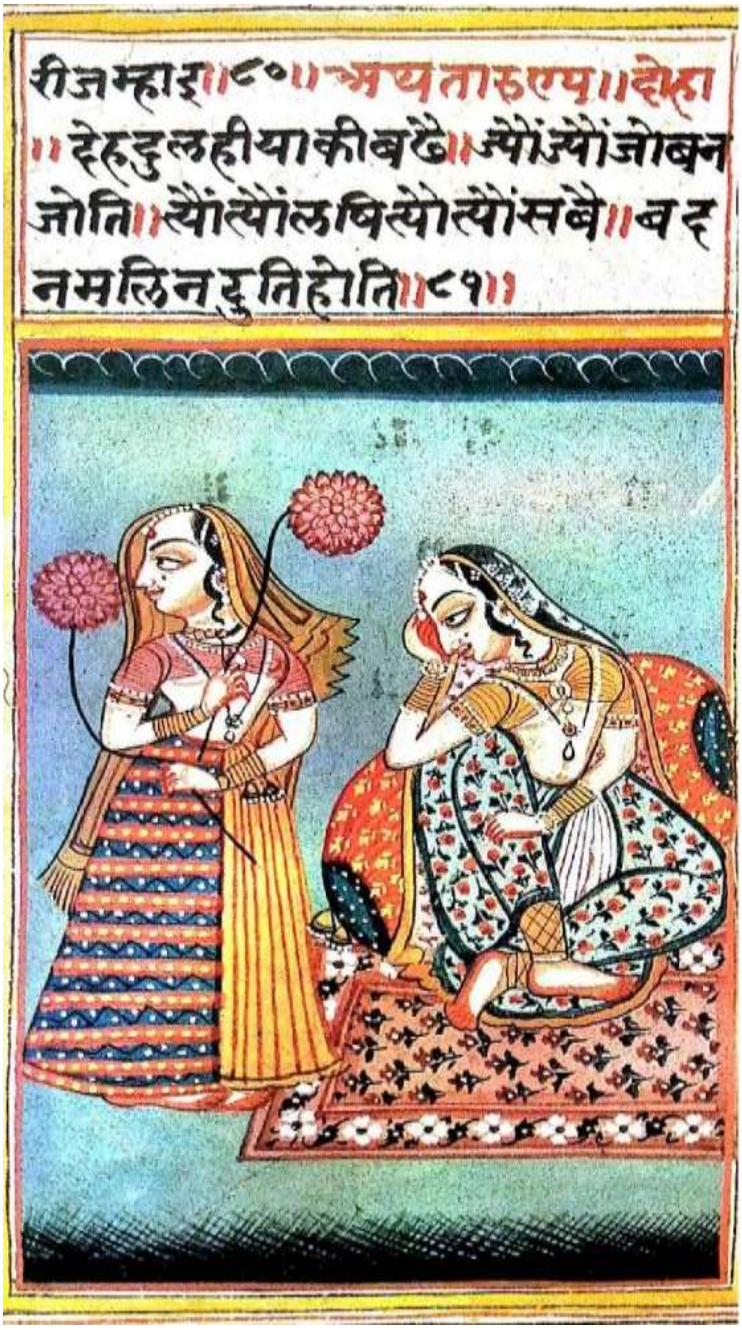

परिशिष्ट : चित्र – 43

नवयौवना नायिका की सखियाँ आपस में बातें करते हुए उसके मुग्धकारी रूप के कारण सौतनों के ह्रदय ईर्ष्या वश जलने पर विचार करती हैं- ज्यों-ज्यों इस दुलहिन की देह में नवांकुर यौवन की चमक छिन-छिन बढ़ रही है वैसे-वैसे ही उसे देखकर सौतनों के शरीर की कांति मारे ईर्ष्या के मलिन होती जा रही है।

यह दोहा बिहारी के रूप सौन्दर्य वर्णन का दोहा है जो कि नवयौवना नायिका के छिन-छिन बढ़ते सौन्दर्य के प्रशंसा का है। इस दोहे पर निर्मित बसोहली शैली के एक चित्र में सुंदर सी कमनीय मुद्रा में बैठी एक स्त्री का चित्रण है जो सौन्दर्य के यौवन में अभी- अभी अंकुरित हुई लगती है। एक और अन्य स्त्री भी इस चित्र में है जो संभवतः इसके रूप की प्रशंसा करते हुए तथा उसमे सौतनों के ह्रदय जलने की बातें करते हुए इसकी सखी हो सकती है। इस दोहे पर निर्मित यह चित्र इसके भाव को बहुत स्पष्ट रूप में तो व्यक्त नहीं कर पाता परन्तु इसमें नायिका की कमनीय मुद्रा, उसके नवयौवन रूप का संकेत देती है तथा अन्य स्त्री के हाथ में पकड़े हुए फले-फूले फूल नायिका के नित बढ़ रहे यौवन को भी व्यंजित कर रहे हैं। इसमें रंगों का संयोजन भी बसोहली के अन्य चित्रों के ही समान है परन्तु नायिका का सौन्दर्य वस्त्रों के रंगों और चित्र सज्जा तथा उसकी मुद्रा के विशेष चित्रण से और भी अधिक बढ़ गया है। इस दोहे में भाव सम्प्रेषण की कमी होने के बावजूद भी कवि बिहारी का यह दोहा सम्प्रेषणीयता में कहीं भी पीछे नहीं है। क्योंकि चित्र की अपनी कुछ सीमायें अवश्य हो सकती हैं परन्तु काव्य में शब्दों की सीमा भी बिहारी ने स्वयं अपने लिए चुनी थी बावजूद इसके भी उन्होंने ऐसे आकर्षक, मनोहारी तथा भावपूर्ण दृश्य अपने दोहे में शब्दों के माध्यम से चित्रित किये हैं।

(34)

"कोटि जतन कोऊ करौ, तन की तपनि न जाइ।

जौ लौं भीजे चीर लौं रहै न प्यौ लपटाइ।।"[60]

परिशिष्ट : चित्र - 44

यह कथन विरह से उत्तप्त नायिका का अपनी सखी से है कि हे सखी!, कोई अब करोड़ यत्न भी मेरे शरीर की इस विरह से उत्पन्न अग्नि को दूर करने की कर ले पर अब यह अग्नि तन से इतनी आसानी से शांत नहीं होगी। मेरे भीतर की यह विरहाग्नि अब तो तब ही शांत होगी जब मेरे प्रियतम मुझसे ऐसे मिलेंगे जैसे मेरे भीतर की अग्नि की ज्वाला को शांत करने के लिए मैंने भीगे वस्त्र को अपने शरीर से लिपटा लिया हो। अर्थात् जिस प्रकार भीगे वस्त्र शरीर से लिपटने पर वस्त्र और शरीर एकमेक हो जाते हैं और शरीर को ठंडक भी महसूस होती है उसी प्रकार ह्रदय को शीतल करनेवाले मेरे प्रियतम को इस विरहाग्नि में मुझे तपने से बचाने के लिए मुझसे भीगे वस्त्र की तरह लिपटना ही होगा। विरह में उत्तप्त नायिका के काम भाव से भी पीड़ित नायिका का चित्रण बिहारी का यह दोहा करता है, जिसका आधार लेकर एक चित्र का भी निर्माण हुआ है। बिहारी के अनेक दोहे ऐसे हैं जिन्होंने रंगों के माध्यम से भी आकार पाया है, उन्हीं में से एक यह दोहा भी है। इस दोहे पर निर्मित चित्र में दो सखियाँ एक-दूसरे के गले में हाथ डाले एक-दूसरे से बातचीत करने की मुद्रा में खड़े होकर एक-दूसरे को देखती हुई चित्रित की गयी हैं। इनकी यह मुद्रा मिलन की आकांक्षा की ओर संकेत करती है। इन दो सखियों के मध्य होने वाले वार्तालाप का संकेत इस चित्र में ही ऊपर की ओर लिखा हुआ बिहारी का उक्त दोहा भी है। कामभावना जो बसंत में अधिक उत्तेजित कर विरहाग्नि को और अधिक बढ़ा देती है उसका संकेत इन सखियों के पीले वस्त्रों से दिया गया है। आभूषण से सुसज्जित एक सखी विरह में उपजे अपने भावों को दूसरी सखी के सामने प्रकट कर रही है। इसी चित्र में एक अन्य दोहा भी कवि बिहारी का है। जिसका भावार्थ तो विरह से ही जुड़ा है परंतु इसमें नायिका ने विरह में चांदनी को भी अंधकारमय माना गया है। जिसका कोई संकेत इस चित्र से नहीं प्राप्त होता। इसलिए ही उस दोहे को इस चित्र की व्याख्या में शामिल नहीं किया गया है। इस चित्र में जो भूमि बनाई गयी है वह काले रंग की तीन पट्टियों से सांप की

धारियों के समान बनाई गयी हैं। पीले रंग का पूरे चित्र में अधिक प्रयोग करते हुए पीले रंग के बॉर्डर के साथ लाल धारियाँ बनाकर इस चित्र को सजाया गया है। बिहारी के इस दोहे पर निर्मित यह चित्र अपनी चित्रांकन क्षमता के साथ बिहारी की चित्रांकन क्षमता का भी द्योतक है।

(35)

"छिप्यौ छबीलौ मुँहु लसै नीलैं अंचर -चीर।

मनौ कलानिधि झलमलै कालिंदी कैं नीर।।"[61]

परिशिष्ट : चित्र - 45

नायिका की सखी नायिका के रूप की शोभा का वर्णन करके नायक के मन में रुचि उपजाती हुई कहती है कि उसका अर्थात् नायिका का छबीला मुख आँचल के पट में छिपा हुआ ऐसी शोभा देता है , मानो चंद्रमा कालिंदी के नीले जल में झलमला कर दिख रहा हो अर्थात् जल में प्रतिबिंबित होकर मंद लहरियों के कारण झलमलाती आभा दे रहा हो। यहाँ नायिका का रूप सौन्दर्य चन्द्रमा के समान बिहारी द्वारा वर्णित हुआ है।

नायिका के इसी सौन्दर्य उपमा के आधार पर एक चित्रकार ने बसोहली शैली में एक चित्र बनाया है। इस चित्र में इस शैली की सभी विशेषताएँ निहित हैं। पीले रंग के हाशिये के भीतर लाल रंग की रेखा से बॉर्डर बनाया गया है जिसमें नीले आँचल को सिर पर डालकर हाथ से पकड़े नायिका चित्रित है। जिसका "ढालदार माथा, एक ही प्रवाहदार ऊंची नाक, कमल के समान नेत्र जो बहुत विशाल हैं।"[62] का चित्रांकन उसके रूप सौन्दर्य का आधार है। आभूषणों से सुसज्जित लाल घाघरे चोली पर नीले पट में छिपा हुआ उस नायिका का मुख अजब शोभा दे रहा है। नायिका के इस सौन्दर्यपूर्ण दृश्य को देखकर ऐसा ही लगता है जैसे नीले कालिंदी में चाँद रुपी मुख झिलमिला रहा हो। चित्रकार ने बिहारी के इस दोहे के शब्दचित्र को रंगचित्र में ढालकर इसकी चित्र क्षेत्र की सफलता को भी प्रमाणित कर दिया है। इस चित्र में आसमान और बादलों के चित्र में पतली नीली पट्टी पर वक्राकार सफ़ेद बादलों को निर्मित करना इस शैली की विशेष पहचान है। बिहारी की नायिका का ऐसा सौन्दर्यपूर्ण चित्रांकन बिहारी के शब्दचित्रांकन की क्षमता को भी प्रमाणित करता है।

(36)

"टटकी धोई धोवती, चटकीली मुख- जोति।

लसति रसोई कैं बगर, जगरमगर दुति होति।।"[63]

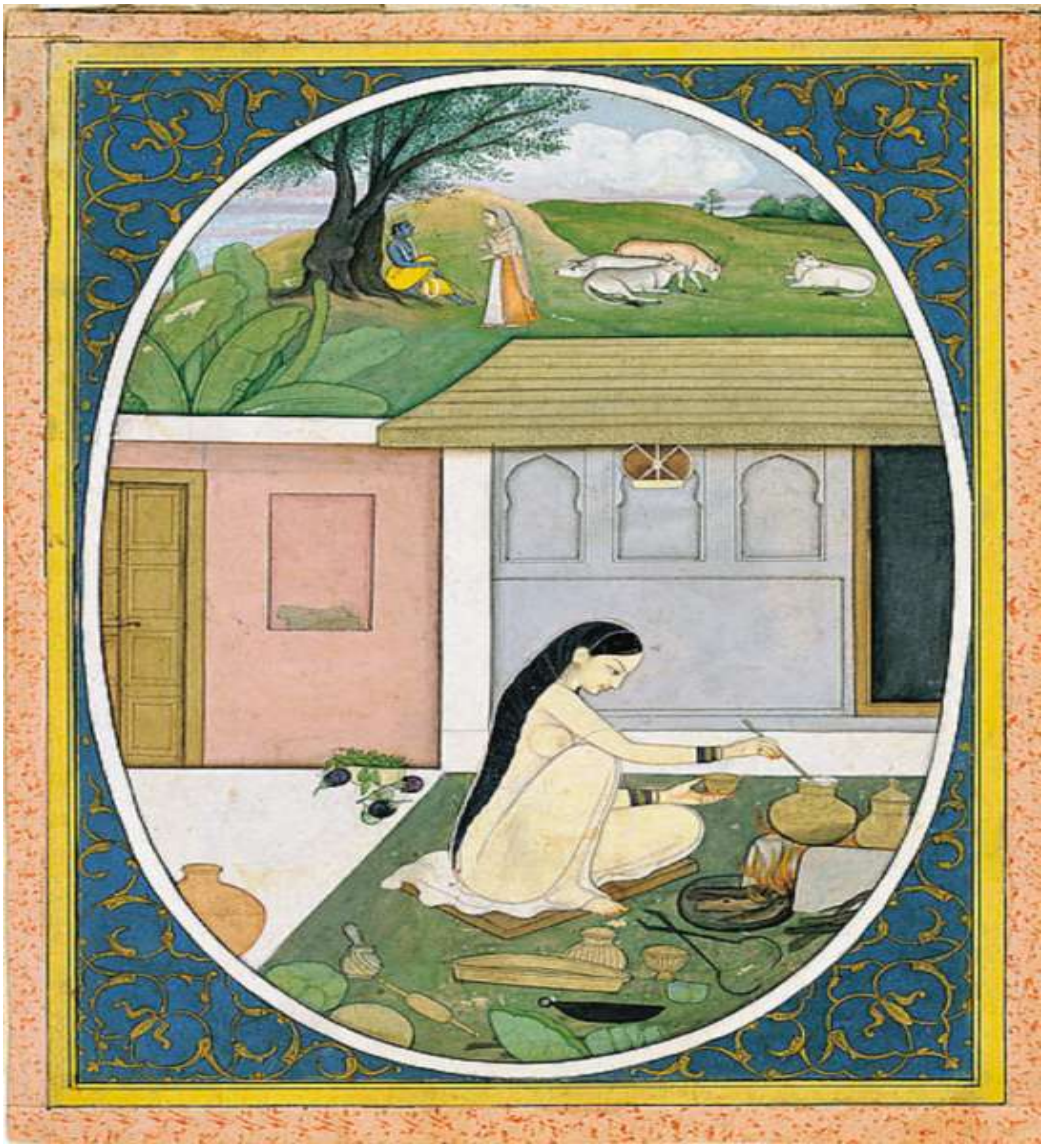

परिशिष्ट : चित्र - 46

बिहारी का यह दोहा रसोई में नायिका की शोभा को व्यक्त करता है। आर्य जाति के बड़े-बड़े घरों में यह परम्परा निभाई जाती है कि नयी बहु के आने पर उससे रसोई बनवाने के निमित्त कोई शुभ दिन तय किया जाता है और उस दिन नववधु नहाकर धोई हुई स्वच्छ तथा अपरस, धोती पहन कर रसोई में प्रवेश करती है तथा रसोई बनाती है। तभी से परिवार के सभी लोग उसके हाथ का बना हुआ भोजन करना आरम्भ कर देते हैं। ऐसे ही अवसर पर रसोई में भोजन बनाती हुई नायिका का वर्णन सखी नायक से उसको देख पाने के सही अवसर को बताने के निमित्त करती है, क्योंकि इस समय वह रसोई के कार्यो में फंसे होने के कारण जल्दी ही घूँघट भी नहीं कर पायेगी। इसलिए नायिका का वर्णन सखी नायक से करती है कि - इस समय तुरंत ही धोई हुई स्वच्छ धोती उसके तन पर शोभित है तथा उसके मुख की ज्योति अग्नि की चमक में और भी अधिक चटकीली हो रही है। इस रूप में नायिका की शोभा देखने योग्य है क्योंकि रसोईघर में नायिका की मुख ज्योति उसके वहां होने से जगमगा रही है। गृहिणी नायिका की शोभा का ऐसा वर्णन उन सभी आरोपों का उत्तर है जिन्होंने रीतिकालीन कवियों पर लोक और परिवार से परे जीवन के वर्णन का आरोप लगाया है।

नायिका की रसोई में काम करते हुए द्युति की शोभा का चित्रण गुलेर शैली में भी हुआ है जिसने बिहारी के इस शब्दचित्र को रंगचित्र में बदल दिया है। इस चित्र में नायिका सुंदर रंग की झीनी धोती धारण किये हुए रसोई में बैठी हुई भोजन बनाते हुए चित्रित है। रसोईघर के चित्रण में चित्रकार ने चूल्हा, बर्तन, अग्नि आदि के चित्रण के साथ-साथ अग्नि की चमक से नायिका के मुख की कांति पर पड़ने वाली चमक का भी इसमें चित्रण हुआ है। पार्श्व में सखी कृष्ण को यह सूचना देने भी पहुँची हुई चित्रित हुई है। इस पूरे चित्र में राधा की शोभा बिहारी के वर्णन के साथ ही इसमें प्रयुक्त रंगों से और अधिक प्रभावी बन गयी है। हाशिये नीले तथा पीले रंग का आलेखन युक्त है।

(37)

"पहुला हारु हियैं लसै, सन की बेंदी भाल।

राखति खेत खरे खरे खरे-उरोजनु बाल।।"[64]

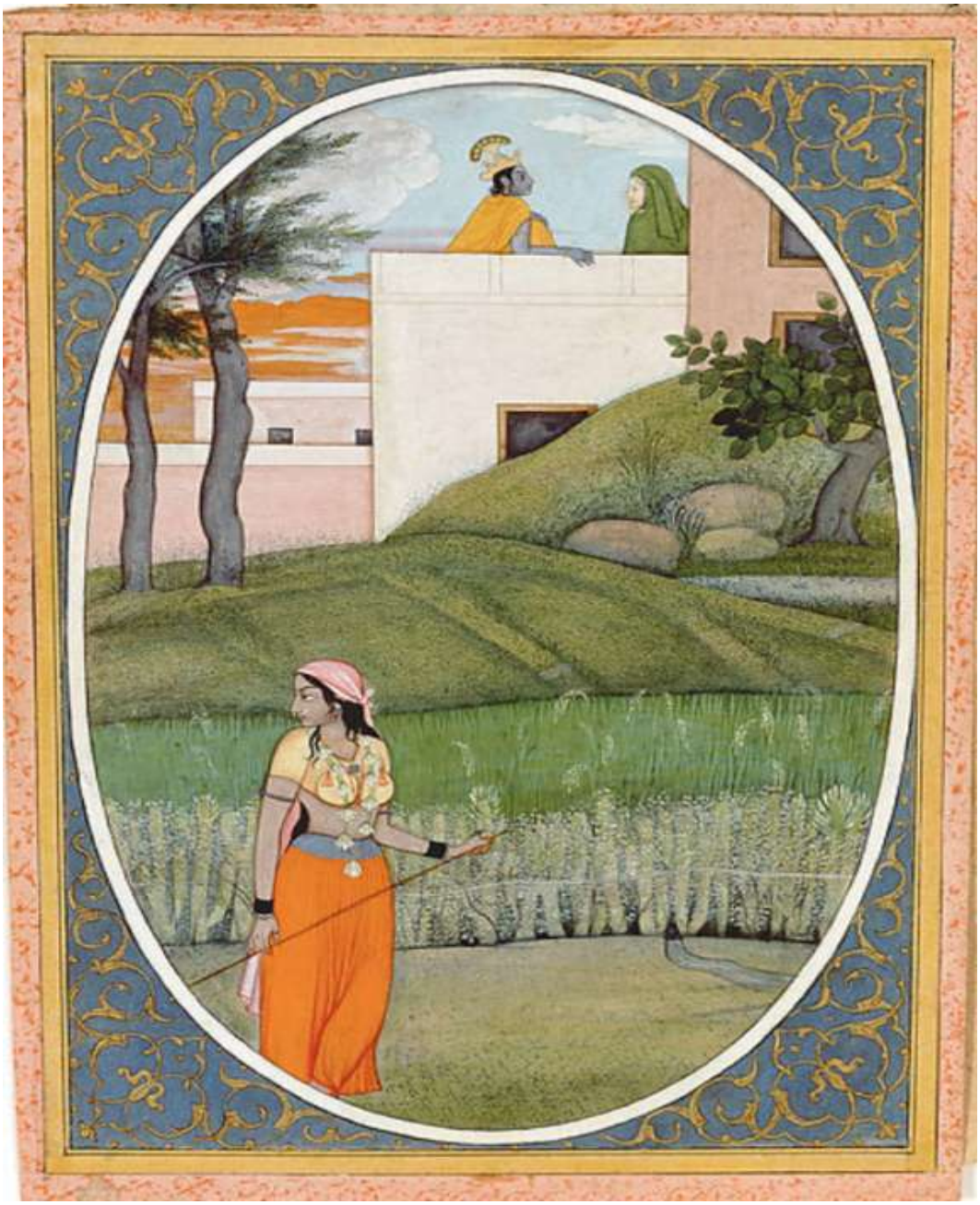

परिशिष्ट : चित्र - 47

इस दोहे में बिहारी ने गँवारी स्त्री द्वारा खेत का भलीभांति ध्यान रखते हुए उसकी स्वाभाविक शोभा का चित्र खींचा है जिसे नायक तिरछी नजरों से देखकर उस पर रीझ रहा है। भावार्थ यह है कि- उस गँवारी नायिका के हृदय पर मात्र 'पहुला' हार अर्थात् कुमुदनी के फूल की माला ही शोभित है और माथे पर सनई के फूल की पंखुड़ियों की बेंदी लगी हुई है। मात्र इन्हीं प्राकृतिक आभूषणों से भी यह गँवारी स्त्री इतनी सुंदर और आकर्षक लग रही है कि नायक का ध्यान अपनी और खींचे हुए है। इस बाला में यह विशेष गुण है कि अपने खरे उरोजो के साथ खेतों को भी खरा अर्थात् अच्छी तरह राखती है।

यहाँ ग्रामीण स्त्री का चित्रण बिहारी ने बड़े मनोयोग के साथ साधारण वस्तुओं के प्रयोग से खींचा है जिसे गुलेर शैली के ही एक चित्रकार ने आकार देकर पृष्ठ पर उतार दिया है। इस चित्र में लाल, पीले तथा नीले हाशिये के भीतर खरे उरोजो वाली ग्रामीण स्त्री कुमुदिनी की माला पहने, हाथ में छड़ी लिए अपने खेतों को निहार कर उनकी देखभाल कर रही है तथा पीछे किसी अटारी पर से नायक किसी अन्य के साथ बात करते हुए तिरछी चितवन से उसके सौन्दर्य को निहार रहा है। इस चित्र में प्रकृति अपने स्वाभाविक रूप में सुंदर तथा श्रेष्ठ बन गयी है जिसमें ग्रामीण स्त्री के धूप में खड़े रहने के कारण उसमें पारंपरिक गौर वर्ण को ही न थोपकर उसे सामान्य स्त्री के रूप में कर्मशील रूप में दिखाया गया है और कर्म के सौन्दर्य का प्रतिपादन इस पूरे दोहे में बिहारी द्वारा शब्दों से खींचा गया चित्र और चित्रकार के द्वारा खींचे गये रंगचित्र दोनों ही यही भावबोध संप्रेषित करते हैं।

बिहारी के कुछ काव्यचित्र ऐसे भी हैं जो चित्रांकन की दृष्टि से उत्तम और महत्त्वपूर्ण हैं परन्तु उन दोहों पर कोई भी चित्र प्राप्य नहीं है और यदि उन पर कोई चित्र निर्माण हुआ भी हो तो वह सीमित समयावधि के कारण मेरी जानकारी में नहीं आ पाये हैं। ऐसे ही बिहारी की चित्रांकन क्षमता को उजागर करने वाले कुछ दोहों का उल्लेख निम्नवत है-

(1)

"नासा मोरि , नचाइ जे करी ककी की सौंह।

काँटे सी कसकैं ति हिय गड़ी कँटीली भौंह।।"[65]

कवि बिहारी का यह दोहा नायिका का चेष्टागत वर्णन है। जिसके भावानुसार नायक ने नायिका के साथ कोई ढिठाई की है जो नायिका को समयानुसार अच्छी नहीं लगी, इसके लिए वह नायक के सामने नाक को थोडा मोड़कर और भौंहो को नचाकर काका की सौंह भरते हुए यह भाव प्रेषित करती है कि मुझे तुम्हारी यह ढिठाई अच्छी नहीं लगी है परन्तु भौंहों को नचाते हुए यह भाव भी संकेत रूप में व्यक्त कर देती है कि यह अनुराग उसे प्रिय भी है। जिससे नायिका की वह बांकी चितवन नायक के भीतर अनुराग रूप में काँटे की तरह कसकती रहकर उसको मिलन के लिए सालती भी रहती है।

बिहारी के उक्त दोहे में नायिका का नाक को मोड़ना, भौंहो को नचाना तथा सौंह भरना बड़ी ही सुंदर अभिव्यक्ति बन पड़ी है। इसे बिहारी ने कुछ शब्दों के माध्यम से ही चित्र रूप में उपस्थित कर दिया है। यह चित्र ऐसा है जो सिर्फ मानस मन में ही नहीं यदि चाहें तो पृष्ठ पर रंगों से भी उकेरा जा सकता है।

(2)

"जज्यौं उझकि झाँपति बदनु, झुकति बिहँसी सतराइ।

तत्यौं गुलालमुठी झुठी झझकावत प्यौ जाइ।।"[66]

इस दोहे में जो वर्णन है वह फाग का अवसर है। इसमें नायक नायिका पर गुलाल फेंकने के लिए गुलाल भरी मुट्ठी उसके ऊपर ताने हुए है। नायिका आँखों में गुलाल पड़ जाने के भय से कभी घूँघट में मुँह ढाँपती है, कभी झुक भी जाती है, फिर हँस भी देती है और आखिर में खिझला जाती है। नायक को उसकी यह चेष्टायें इतनी सुखद लगती हैं कि वह उसकी यह गुलाल से खुद को बचाने की चेष्टाएँ बार-बार करते हुए देखने के निमित्त झूठे ही गुलाल भरी मुट्ठी को उस पर ताने रहता है। डॉ. बच्चन सिंह के शब्दों में "यहाँ चेष्टा का सुख कितना काम्य हो उठा है।"[67] नायक-नायिका की इन मनोहारी चेष्टाओं को कवि बिहारी ने अपने शब्दों के माध्यम से मानस चित्र रूप में जीवंत बना दिया है जिसके पठन मात्र से ही नेत्रों के समक्ष होली के दिवस में नायक नायिका पर गुलाल डालने की चेष्टा करता हुआ तथा नायिका की उससे बचने के प्रयास में चेष्टाएँ करने से उनका प्रेम-विनोद चित्रित हो जाता है। इसे यदि कोई चित्रकार रंग चित्र से फलक पर दृश्यमान करना चाहे तो भी इन चेष्टागत संकेतो से सहज ही कर पाना संभव है क्योंकि उझकना, ढाँपना, झुकना और हँसना तथा गुलालमुट्ठी को ताने हुए नायक का चित्रण आदि बिहारी के इन स्पष्ट संकेतो से चित्र बन जायेगा। इस दोहे में बिहारी ने जितनी चेष्टाएँ, क्रियाएँ तथा भंगिमाएँ एक साथ, एक ही दोहे में उभारी है उसमें बिहारी के कवि रूप के साथ उनका चित्रकार रूप भी उजागर हो गया है।

(3)

"हँसी ओठनु-बिच करु उचै, कियैं निचौहैं नैन।

खरैं अरैं प्रिय कैं प्रिया लगी बिरी मुख दैन।।"[68]

बिहारी द्वारा रचित इस दोहे में विश्रब्धनवोढ़ा नायिका का वर्णन है जो अपने प्रियतम पर अब थोड़ा अधिक विश्वास करने लगी है। इसी कारणवश वह नायक को पान खिलाने लगी है। पान खिलते समय नायिका का चेष्टागत वर्णन इस दोहे में हुआ है। जिसका भावार्थ है- प्रियतम के हठ करने पर नायिका अपने होंठो में ही हँसकर, हाथ ऊँचे और नेत्रों को नीचे की ओर शरमाने की मुद्रा में रखते हुए उसके मुख में पान की बीड़ी दे देती है। एक ओर जहाँ "संकोच, लज्जा और विश्वास का संगम चित्र को आत्यान्तिक ऐन्द्रिय मनोरमता प्रदान करता है"[69] वहीं दूसरी ओर इसमें नायिका की भावभरी चेष्टाएँ और क्रियाएँ मनमोहक छवि के साथ चित्र रूप में उभर आती हैं। होंठो के भीतर ही हँसना, हाथों को ऊँचा करना तथा नेत्रों को नीचे कर शरमाना और ऐसे ही प्रियतम के मुँह में पान की बीड़ी दे देना, नायिका की इन सभी चेष्टाएँ तथा भाव-भंगिमाओं का चित्रण बिहारी ने शब्दों के माध्यम से बड़े मनोयोग से व्यक्त कर दिया है। बिहारी रचित यह दोहा उनकी चित्रांकन क्षमता का अन्यतम उदाहरण है।

(4)

"बिहँसति सकुचति सी, दिऐं कुच- आँचर-बिच बाँह।

भीजैं पट तट कौं चली, न्हाइ सरोवर माँह।।"[70]

स्नान के उपरांत सरोवर से निकलकर तट की ओर जाती हुई नायिका की मनोहारी चेष्टाओं और भाव-भंगिमाओं का चित्रांकन इस दोहे में हुआ है। इसका भावार्थ यह है कि

नायिका सरोवर से स्नान करके निकली है जिससे उसके वस्त्र गीले होने के कारण शरीर से चिपक गये हैं। लज्जावश वह अपने भीगे वस्त्रों में थोड़े अधिक परिलक्षित होते उरोजो के उभार को छिपाने के लिए वस्त्रों में ही अपनी बाँहों से उसे ढाँप कर छुपाने का प्रयास करती हुई मुस्काती और संकुचाती हुई सी भीगे वस्त्रों में तट की ओर चली जा रही है। बिहारी द्वारा खींचे गये इस दृश्य में नायिका का मुस्काना, संकुचित होना, इसी संकोच में भीगे वस्त्रों में उरोजों को बाँहों से ढाँपने का प्रयास करना और इन्हीं सब भावों से उसके तट की ओर जाने में बिहारी विविध चेष्टाओं द्वारा मनमोहक चित्र खींच देते हैं, "कभी-कभी कविवर बिहारी लाल ने गत्यात्मक बिम्बों की ऐसी मादक रेखाएँ एक साथ संयोजित की हैं जिनसे रागात्मकता का सहज रंग स्वत: फैल गया है"[71] इन सभी चेष्टाओं और भंगिमाओं को शब्दों में उतारकर बिहारी एक दृश्य रूप में नेत्रों के समक्ष उपस्थित कर देते हैं जिसे आधार स्वरुप लेकर वास्तविक रंगचित्र का निर्माण सरल तथा संभव हो गया है। मुस्कुराहट में सकुचाहट तथा आँचल के बीच में बाहें डालकर भीगे कपड़ों में सरोवर से जाती हुई नायिका का सफल तथा सुंदर चित्र इतने संकेतो के माध्यम से खींचा अवश्य जा सकता है पर आश्चर्य है कि अभी तक इस दोहे पर शायद ही कोई ऐसे चित्र निर्माण हुआ हो जिसमें नायिका के इस अवस्था में विविध भाव तथा भंगिमा एक साथ उसके मुख पर उभर आयें हों।

(5)

"सुनी पग-धुनि चितई इतै न्हाति दियैं हीं पीठि।

चकी, झुकी, सकुची, डरी, हँसी लजी सी डीठि।।"[72]

कविवर बिहारी के इस दोहे में चित्रांकन का कई भावरूपों और क्रियाओं को एक ही समय में दो पंक्तियों के शब्द चित्र लाकर एक विशिष्ट सोपान निर्मित होता है। नायक को अकस्मात आया देख नायिका ने पीठ दिए ही नायक की ओर मुड़कर ज्यों ही देखा तो आश्चर्यचकित हो गयी। इस आश्चर्यचकित भाव में वह अपने शरीर को छुपाने के निमित्त पानी में ही झुकी तथा गीले वस्त्रों को ऐसे ही लपेट स्वाभाविक ही सकुचा गयी। स्वयं को किसी और के देखे न जाने का भय भी ऐसा ही है जो नायिका को डरा रहा है परन्तु अंत में नायक को अपनी ओर देखता पाकर वह लजा भी गयी और इसी लजीली दृष्टि में दोनों एक-दूसरे को मुस्कराकर अपने प्रेम-प्रदर्शन का सांकेतिक भाव भी संकेतित कर रहे हैं।

इस दोहे में सारी दृश्यावली एक ही पंक्ति में बिहारी प्रकट कर देते है। इस पूरे दृश्य में नहाते हुए ही पीठ देना, चकित होना, झुकना, संकुचना, डरना, हँसना तथा लजाना एक साथ इतने सारे भाव नायिका के मुख पर बिहारी दिखा देते हैं। यह पूरा भावबोध एक चलचित्र की तरह नेत्रों के सामने से डोल जाता है जो कि बिहारी की विशेषता है। "बिहारी के स्नान चित्र उनकी रेखांकन-कला के सर्वोच्च बिन्दुओं को दिग्दर्शित करते हैं। मनोवृत्तियों का सूक्ष्म चित्रण, दृश्य का यथातथ्य प्रस्तुतिकरण, इन चित्रों की विशेषता है।"[73] परन्तु आश्चर्य है कि बिहारी की इस विशेषता पर बहुत ही कम ध्यान आलोचकों का गया है।

(6)

"कंज-नयनि मंजनु किए, बैठी ब्यौरति बार।

कच-अँगुरी-बिच दीठि दै, चितवति नंदकुमार।।"[74]

नायिका की वैदिग्ध्य पूर्ण क्रियाओं का वर्णन सखी करती है जिसका भावार्थ यह है कि वह कंज नयनों को काजल से रंग कर बैठी नायिका स्नान कर आई है और बैठकर अपने बाल सुलझा रही है। इसी क्रम में वह व्याज से अपने बालों तथा उँगलियों के बीच से दृष्टि देकर अपने प्रियतम को देख रही है।

बिहारी के इस दोहे के माध्यम से नायिका के चातुर्य तथा वैदग्ध्य पूर्ण क्रियाओं का जो शब्दचित्रण किया गया है वह अवश्य प्रशंसनीय है। कंचन के समान नेत्र वाली नायिका काजल से लगे नेत्र किये हुए, बैठकर बाल सुलझा रही है यह बालों के बीच अंगुरी देते हुए उसके बीच में से दृष्टि देते हुए नंदकुमार को देख रही है। यह पूरा दृश्य एक चित्र है जिसे पृष्ठ पर रंगों के माध्यम से उतारने की आवश्यकता है। बिहारी के इसी चित्र खींचने वाली विशेषता पर स्वीकृति गुरुदेव नारायण भी देते हैं, "बिहारी अपने दोहों में रूप का चित्र सा खींच देते हैं।"[75]

(7)

कर लै चूमि, चढ़ाइ सिर, उर लगाइ , भुज भेटि।

लहि पाती पिय की लखति , बाँचति धरति समेटि।।[76]

इस दोहे में बिहारी ने नायिका का वर्णन किया है जो प्रिय के दूर चले जाने से उनकी बाट जोह रही है। ऐसे में प्रिय का पत्र आने पर वह ख़ुशी तथा भावोद्वेलन में जैसी मनमोहक और भावपूर्ण प्रेमाविभोर करने वाली क्रियाएँ और अनुरंजक चेष्टाएँ करती है वह इस दोहे में महत्त्वपूर्ण है।

नायिका हाथों में पत्र को लिए पहले तो हर्षातिरेक में उसे चूमती है और फिर प्रेम के प्रतीक पत्र को प्रिय के एहसास स्वरुप सिर पर लगाती है, फिर पत्र को ह्रदय से लगाकर शीतलता का अनुभव करती है। पत्र को ही प्रियतम मिलन का भाव मानकर वह उसे अपनी भुजाओं में भर लेती है। सिर्फ इतना ही नहीं वह नायिका प्रेम में विह्वल होकर कभी उस पत्र को लेकर देखती है, कभी पढ़ती है और फिर कभीं अपनी धरोहर रूप में उसे सम्भाल कर रख देती है। पत्र प्राप्ति पर नायिका में यह उत्साह मनमोहक है जिसे बिहारी ने बहुत स्पष्ट रूप में अभिव्यक्त किया है। इतने बड़े और गहन भाव-बोध को बिहारी ने बड़ी ही सहजता से काव्य के साथ काव्यचित्र के रूप में भी उभार दिया है।

(8)

"त्रिबली, नाभि दिखाइ, कर सिर ढकि, सकुचि, समाहि।

गली , अलि की ओट कै , चली भली बिधि चाहि।।"[77]

नायक को देख कर नायिका अपना अनुराग उस पर प्रकट करने के लिए जो मनोहारी चेष्टाएँ करती है, बिहारी द्वारा रचित इस दोहे में उन्हीं का वर्णन है जो नायक का स्वगत कथन प्रतीत होता है- (भावार्थ) वह मेरा उससे सामना होने पर संकुचित होकर हाथों से सिर ढंकने का प्रयत्न करते हुए हाथ उठाकर इस क्रिया से अपनी त्रिबली और नाभि मुझे दिखाकर सखी की ओट लेते हुए भली प्रकार से मुझे देखकर गली में चली गयी। इस दोहे में नायिका द्वारा संकुचाना, हाथ उठाना, सिर ढंकने का प्रयास करना, सखी की ओट लेकर नायक को निहारना और गली में चले जाना, इतनी सारी क्रियागत चेष्टाएँ एक शब्दचित्र के रूप में सम्पूर्ण दृश्य

हमारे नेत्रों के समक्ष उपस्थित कर देती हैं। इस दोहे के आधार पर चित्रांकन के अर्थ में यदि विचारा जाये तो, "नारी मनोविज्ञान का कवि ने गहरा परिचय दिया है"[78] तथा एक ही समय में बिहारी ने नायिका की सभी अनुराग व्यंजक चेष्टाएँ पाठक के सामने उभार दी हैं जिससे मानस बिम्ब में निर्मित चित्र के आधार पर यदि कोई चित्रकार चित्र निर्माण करना चाहे तो वह अवश्य सरलता तथा सफलतापूर्वक कर सकता है। ऐसी ही क्रियात्मक, चेष्टागत तथा विभिन्न भाव-भंगिमाओं को एक ही जगह पर एक दृश्य में उभार देना बिहारी की विशेषता है।

(9)

"झटकि चढ़ति उतरति अटा, नैंक न थाकति देह।

भई रहति नट कौ बटा अटकी नागर-नेह।।"[79]

बिहारी द्वारा रचित सतसई के इस दोहे में नायिका द्वारा नायक को बार-बार देखने के निमित्त अटारी पर चढ़ना और उतरते समय की उसकी भाव-भंगिमाओं का वर्णन नट की चकई के सादृश्य से हुआ है जिसे सखी के माध्यम से कवि प्रेषित करते हैं- (भावार्थ) वह झपटकर फुर्ती से अटारी पर कभी चढ़ती है और कभी उतरती है अर्थात् फिर-फिर चढ़-उतर रही है। इस कर्म में उसकी वह देह किंचितमात्र भी थकती नहीं है और न ही ठहरती है। नायिका तो चतुर नायक के स्नेह रुपी डोरे में अटकी हुई नट की चकई हुई सी बनी रहती है। अर्थात् उस नायिका का नायक पर इतना अनुराग है कि वह नायक के स्नेह में ही बंधी रहना चाहती है।

नायक के प्रति नायिका के नेत्रों में अनुराग तथा उसमें उसका अटारी पर बार-बार चढ़ना, उतरना आदि चित्रांकन की दृष्टि से देखा जाये तो इसका चित्रांकन पूर्णत: संभव है। सादृश्य रूप में नट की चकई को भी चित्र में ही एक तरफ इंगित करके चित्रित किया जा सकता है और नायक को सखी द्वारा नायिका की यह दशा बताते हुए भी चित्र के एक भाग में चित्रित किया जा सकता है। बस इसके लिए आवश्यकता है उसके चित्रांकन की जो अभी तक नहीं हो पाया है परन्तु भविष्य में इस और दृष्टिपात करने की कोशिशें चित्रकारों द्वारा शायद विचारणीय हो जाएँ।

(10)

"दृग मिहचत मृग-लोचनी भरयौ, उलटि भुज, बाथ।

जानि गई तिय नाथ के हाथ परस हीं हाथ।।"[80]

कविवर बिहारी का यह दोहा नायक-नायिका के प्रेम और विनोद को शब्दांकित करता है। नायक खेल-खेल में पीछे से आकर नायिका के मृग समान नेत्रों को अपने हाथों से ढाँप देता है परन्तु नायिका उसे उसके स्पर्श से ही पहचान लेती है। अपने इस अनुराग को व्यक्त करते हुए उस नायिका ने नायक को बिना यह दिखाए की वह जानती है कि पीछे नायक है, अपनी भुजाओं को उलटकर उसे अपनी बाँहों में भर लिया है अर्थात् नायक के गले लग जाती है। इस दोहे में दृग मिहचना, भुजाओं को उलटना, बांहों में भरना आदि नायक-नायिका की इन सभी क्रियागत प्रेम-विनोद भरी चेष्टाओं को कविवर बिहारी ने दृश्य चित्र में शब्दों के माध्यम से उकेर दिया है। इससे मानस में निर्मित चित्र के आधार पर रंगचित्र को कागज पर एक ही चित्र में दो दृश्यों की उपस्थिति दिखाकर उतारा जा सकता है। पहले दृश्य में नायिका के दृग मिहचे हुए नायक तथा दूसरे दृश्य में भुजाओं को उलटकर नायक को बाँहों में भरते हुई

अवस्था में नायिका का चित्रण हो सकता है। अभी तक यह कार्य हुआ नहीं है क्योंकि इसका कोई चित्र हमें प्रत्यक्ष रूप में उपलब्ध नहीं हो पाया है। उक्त दोहे पर भविष्य में चित्र-निर्माण की संभावनाएँ इसलिये अभी भी शेष हैं।

(11)

"भौंह उँचे, आँचरु उलटि, मौरि मोरि, मुहु मोरि।

नीठि नीठि भीतर गई, दीठ दीठि सौं जोरि।।"[81]

नायिका ने अपने द्वार से नायक को देखकर जो चेष्टाएँ की हैं, उन पर नायक रीझ गया है। नायिका की चेष्टाओं को नायक सखी के सामने वर्णित करता है कि- (भावार्थ) वह नायिका अपनी भौंहों को ऊँचा कर के, आँचल किसी व्याज से उलटकर और फिर मुंह को मोड़कर अर्थात् पीछे की ओर फिरकर, दृष्टि से दृष्टि मिलकर भीतर चली गयी। इस दोहे में बिहारी नायिका की विविध भंगिमाओं यथा- भौंह ऊँचा करना, आँचल उलटना, मुँह को मोड़कर पीछे की ओर फिर-फिरकर देखते हुए जाना आदि को एक ही दोहे में इस प्रकार उपस्थित कर देते हैं कि एक दृश्य नेत्रों के समक्ष आ जाना स्वाभाविक ही है और इस दृश्य को अनेकों क्रियाओं और भावों, भंगिमाओं के द्वारा जीवित कर देने के लिए ही बिहारी जाने जाते हैं। परन्तु इसको कागज पर रंग के माध्यम से भी उतारा जा सकता है। इस दृष्टि से अभी भी बिहारी की चित्रात्मकता विचारणीय है।

(12)

"सुरँगु महावरु सौति- पग निरखि रही अनखाइ।

पिय-अँगुरिनु लाली लखैं खरी उठी लगि लाइ।।"[82]

बिहारी का यह दोहा संभोग-दुखिता नायिका की अवस्था का चित्रण है जिससे जुड़ी घटना का वृत्तांत सखी सखी से कहती है क्योंकिं, "प्रत्येक नायिका के साथ दूतियों, सखियों और सेविकाओं की सहभागिता है जो नायक से दूर रहने की बेचैनी में ली गयी उसकी हर सांस की राज़दार हैं और नायक के साथ उसके द्वारा बिताये गये हर पल की लेखाकार"[83] सखी का कथन है - (भावार्थ) अपनी सौतन के पाँव में सुंदर और सुघड़ रूप से लगा हुआ महावर देखकर नायिका अनखा रही है अर्थात् ईर्ष्या करने लगती है परन्तु जब वह अपने प्रियतम की अँगुली में महावर की लाली देखती है तो उसके हृदय में भाँति-भाँति की अग्नि उठ जाती है। इसका कारण है कि क्योंकि उसे अंदाजा हो जाता है कि सौत के पाँव में लगी यह सुघर महावर खुद मेरे ही पति ने उसे लगाई है तो ईर्ष्या का भाव प्रियतम के धोखे से खंड-खंड हो जाता है। इस दोहे में नायिका के भीतर जो ईर्ष्या, जो पीड़ा और वेदना उपजी है उसे शब्दों के माध्यम से चित्र के रूप में बिहारी अभिव्यक्त करने में सफल हुए हैं।

(13)

"पीठि दिये हीं, नैंक मुरी, कर घुँघट-पटु टारि।

भरि, गुलाब की मुठि सौं, गई मूठि सी मारि।।"[84]

यह दोहा नायिका का चेष्टागत वर्णन है जो बिहारी ने शब्दचित्र के रूप में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर दिया है। नायक सखी से नायिका के होली खेलने पर उसके साथ होली खेलने में होने वाले प्रेम व्यापार और उसके एहसास का वर्णन करता है कि (भावार्थ) नायिका ने पीठ दिए ही थोड़ा सा मुड़कर और अपने हाथ से घूँघट के पट को डालते हुए अपनी गुलाल से भरी मुट्ठी से मेरे ऊपर मूठ मार दी जिसमें इस गुलाल भरी मुट्ठी के मूठ से मेरे अर्थात् नायक के हृदय में जो अनुराग उत्पन्न हुआ है वह ऐसा है जैसे वह उसके हृदय पर भी अपने प्रेम और

अनुराग का आघात कर गयी हो। उक्त दोहे में पीठ देकर नेंक मुड़ना और हाथ से घूँघट के पट को टालते हुए गुलाल से भरी मुट्ठी को नायक के ऊपर मारना आदि को बिहारी ने इस नायिका की पूरी मुद्राओं, विभिन्न क्रियाओं और चेष्टाओं के साथ शब्दचित्र में जीवंत कर दिया है जिसे रंग के माध्यम से चित्र रूप में पृष्ठ पर उतारकर प्राणों का संचार किया जा सकता है बशर्ते दोहों की इस चित्रांकन क्षमता को समझा जाये तो ही। इस पूरे दृश्य को एक ही चित्र में बहुत ही सहजता से बिहारी के इन सभी क्रियागत, चेष्टागत तथा मुद्रागत संकेतों के द्वारा चित्रित किया जा सकता है।

इस प्रकार यदि समग्रता में देखा जाये तो काव्य और चित्र का सम्बन्ध मानव मन की कोमलतम अभिव्यक्तियों से है। इसमें विलक्षणता यह है कि इस अभिव्यक्ति को काव्यकार शब्दों के माध्यम से चित्र रूप में भी उतार सकता है और चित्रकार रंगों के माध्यम से काव्य रूप में भी। काव्य और चित्र का यह सम्बन्ध अनेक भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वान स्वीकार करते आये हैं यथा- रामचन्द्र शुक्ल, प्रेमचंद, होरेस, सिमोनीडिज आदि सभी के लिए सच्ची कविता वही है जो एक चित्र बना दे। काव्य में चित्र बनाने वाली ऐसी ही कविता कवि बिहारी ने भी की है जिन्होंने अपने काव्य में भावों का भंगिमाओं, क्रियाओं तथा चेष्टागत वर्णन करके चित्रों को पाठक के समक्ष उपस्थित कर दिया है। 'कल्पना की समाहारशक्ति' और 'भाषा की समासशक्ति' का सहारा लेकर बिहारी ने घटनापूर्ण जो चित्र अपने दोहा छंद में खींचे है उससे पूरा दृश्य चित्र रूप में नेत्रों के समक्ष स्वत: ही आने लगता है। जिसे विभिन्न शैली के मध्यकालीन तथा आधुनिक चित्रकारों ने काष्ठ, कपड़े तथा कागज पर रंगों के माध्यम से उतारकर बिहारी के काव्य में चित्रांकन की विशेषता को प्रमाणित कर दिया है। शब्दों में

रेखाओं, क्रियाओं, भंगिमाओं और चेष्टाओं का ऐसा वर्णन ही कविवर बिहारी को चित्रकार बना देता है, साथ ही उनके काव्य में जीवंतता का भी संचार करता है, "जिस प्रकार कुशल चितेरे के चित्र की रेखायें तथा रंग बोलने लगते हैं ठीक उसी प्रकार बिहारी का प्रत्येक अक्षर बोलता प्रतीत होता है।"[85] कवि बिहारी के काव्य की यह सजीवता यदा-कदा लगभग सभी टीकाकारों, व्याख्याकारों, आलोचकों ने स्वीकार की है परंतु उस पर स्वतंत्र रूप से कोई विचार किसी आलोचक का नहीं रहा है।

बिहारी चित्रमयता और चित्रकला की संभावना को अपनी कविताई में सजाने सँवारने वाले दुर्लभतम कवियों में से हैं। मूर्त को अमूर्तन में ले जाने को रहस्यवादी वितान कह कर उसकी विविध कोटियों की साहित्य में विवेचना और प्रशंसा की गयी है। इनसे अलग बिहारी अमूर्त भावों को मूर्त रूप प्रदान करने वाले कवि हैं । बिहारी ने अनेक आकर्षक चित्रों, मुद्राओं, भावों एवं भंगिमाओं को आकार के साथ प्राण भी दिया है। यही कारण है कि मध्यकाल में बिहारी के दोहों में छिपी चित्रांकन क्षमता को पहचान कर अनेक राजाओं तथा चित्रकारों ने अपने क्षेत्र विशेष शैली यथा- काँगड़ा, जयपुर, मेवाड़, बसोहली, गुलेर आदि को लेकर कपड़े तथा कागज पर रंगों के माध्यम से उतरवाया या उतारा। इसके बाद भी अभी तक बिहारी की यह चित्रांकन की विशिष्टता वर्तमान समय में बहुत अधिक प्रकाश में नहीं आ पाई है। जिसके कारण बिहारी के कई चित्रांकन क्षमता के द्योतक दोहे रंगों से साकार नहीं हो पायें हैं, परन्तु इससे बिहारी में चित्रांकन का महत्त्व कहीं भी कम नहीं होता क्योंकि कवि बिहारी मध्यकालीन कवियों में सबसे अधिक चर्चित रहने वाले कवियों में से एक हैं। इसमें बिहारी का काव्य कर्म क्षेत्र ही उनकी इस सम्पूर्ण कीर्ति का आधार है जो लम्बे समय से सूर्य के प्रकाश की तरह विद्वानों, टीकाकारों, आलोचकों और शोधार्थियों की दृष्टि में नित नये रूप में उद्दीप्त होता रहा है। अंत में सिर्फ इतना ही कह सकते हैं, कि बिहारी के काव्य में चित्रांकन के

विविध आयाम मिलते हैं और जिनमें चित्रांकन का पूर्ण रूप से समावेश हुआ है। बिहारी के काव्य में चित्रांकन ऐसे ही है, जैसे- 'हाथ कंगन को आरसी क्या?' और 'प्रत्यक्षम् किं प्रमाणम्'।

सन्दर्भ :

1. दुबे, श्यामसुंदर; संस्कृति, समाज और संवेदना; ग्रंथलोक प्रकाशन; नयी दिल्ली; संस्करण: 2004; पृष्ठ. 99
2. शर्मा, हरवंशलाल; शास्त्री, परमानन्द; बिहारी और उनका साहित्य; भारत प्रकाशन मंदिर, अलीगढ; पृष्ठ. 7
3. नारायण, गुरुदेव; बिहारी: एक नव्यबोध; बालोदय प्रकाशन, 315/148, बाग महानारायण, लखनऊ; संस्करण: 1979; पृष्ठ. 44
4. लाल, किशोरी; बिहारी काव्य की उपलब्धियाँ; साहित्य भवन [प्रा] लिमिटेड, के. पी. कक्कड़ रोड, इलाहाबाद; संस्करण: 1975; पृष्ठ. 166
5. 'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद-211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 312; दोहा संख्या- 699
6. वही; पृष्ठ. 290; दोहा संख्या- 648
7. वही; पृष्ठ. 21; दोहा संख्या- 1
8. वही; पृष्ठ. 181; दोहा संख्या- 385
9. 'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 182

10. शर्मा, लोकेश चन्द्र; भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास; कृष्णा प्रकाशन मीडिया (प्रा.) लि., कृष्णा हाउस 11, शिवाजी रोड, मेरठ- 250001; संस्करण: 2017; पृष्ठ. 121

11. 'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण : 2008; पृष्ठ. 181; दोहा संख्या- 384

12. सिंह, बच्चन; बिहारी; साहित्य अकादमी, रवीन्द्र भवन, 35, फ़िरोज़शाह मार्ग, नयी दिल्ली- 110001; संस्करण: 1982; पृष्ठ. 23

13. वर्मा, अविनाश बहादुर; वर्मा, अनिल; भारतीय चित्रकला का इतिहास; प्रकाश बुक डिपो, बड़ा बाजार, बरेली 2343003; संस्करण: 2006; पृष्ठ. 227

14. प्रताप, रीता; भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास; राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी, प्लाट नं. 1, झालाना सांस्थानिक क्षेत्र, जयपुर- 302004; संस्करण: 2016; पृष्ठ. 14

15. 'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 195; दोहा संख्या- 420

16. वही; पृष्ठ. 114; दोहा संख्या- 217

17. वर्मा, अविनाश बहादुर; वर्मा, अनिल; भारतीय चित्रकला का इतिहास; प्रकाश बुक डिपो, बड़ा बाजार, बरेली 2343003; संस्करण: 2006; पृष्ठ. 227

18. 'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 40; दोहा संख्या- 32
19. प्राचीन एवं मध्यकालीन काव्य; दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक- 124001; पृष्ठ. 409-410
20. 'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 164; दोहा संख्या- 339
21. वही; पृष्ठ. 41; दोहा संख्या- 35
22. वही; पृष्ठ. 238; दोहा संख्या- 516
23. वही; पृष्ठ. 277; दोहा संख्या- 611
24. प्रताप, रीता; भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास; राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी, प्लाट नं. 1, झालाना सांस्थानिक क्षेत्र, जयपुर- 302004; संस्करण: 2016; पृष्ठ. 272
25. 'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 307; दोहा संख्या- 687
26. वही; पृष्ठ. 123; दोहा संख्या- 241
27. वही; पृष्ठ. 226; दोहा संख्या- 489
28. वही; पृष्ठ. 104; दोहा संख्या- 190
29. वही; पृष्ठ. 204; दोहा संख्या- 440

30.वही; पृष्ठ. 150; दोहा संख्या- 301

31.सिंह, दूधनाथ; लेख; रीतिकाव्य मूल्यांकन के नये आयाम; सं. प्रभाकर सिंह; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद-211001; संस्करण: 2016; पृष्ठ. 226

32.'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 86; दोहा संख्या- 143

33.वही; पृष्ठ. 27; दोहा संख्या- 6

34.वही; पृष्ठ. 65; दोहा संख्या- 95

35.वर्मा, अविनाश बहादुर; वर्मा, अनिल; भारतीय चित्रकला का इतिहास; प्रकाश बुक डिपो, बड़ा बाजार, बरेली 2343003; संस्करण: 2006; पृष्ठ. 227

36.'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 90; दोहा संख्या- 152

37.नगेन्द्र; देव और उनकी कविता; नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली; पृष्ठ. 177.

38.'रत्नाकर', जगन्नाथ दास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 126; दोहा संख्या- 249

39.वही; पृष्ठ. 91; दोहा संख्या- 155

40.वही; पृष्ठ. 305; दोहा संख्या- 683

41.जैन, रवीन्द्रकुमार; बिहारी नवगीत; नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002; संस्करण: 1976; पृष्ठ.15

42.शर्मा, लोकेश चन्द्र; भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास; कृष्णा प्रकाशन मीडिया (प्रा.) लि., कृष्णा हाउस 11, शिवाजी रोड, मेरठ- 250001; संस्करण: 2017; पृष्ठ. 114

43.'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 300; दोहा संख्या- 690

44.वही; पृष्ठ. 158; दोहा संख्या- 322

45.वही; पृष्ठ. 301; दोहा संख्या- 675

46.वही; पृष्ठ. 284; दोहा संख्या- 632

47.वही; पृष्ठ. 218; दोहा संख्या- 472

48.सिंह, दूधनाथ; लेख; रीतिकाव्य मूल्यांकन के नये आयाम; सं. प्रभाकर सिंह; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2016; पृष्ठ. 225

49.'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 135; दोहा संख्या- 268

50.वही; पृष्ठ. 171; दोहा संख्या- 356

51.वही; पृष्ठ. 239; दोहा संख्या- 522

52.वही; पृष्ठ. 29; दोहा संख्या- 12

53. ‘रत्नाकर’, जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 29
54. वर्मा, अविनाश बहादुर; वर्मा, अनिल; भारतीय चित्रकला का इतिहास; प्रकाश बुक डिपो, बड़ा बाजार, बरेली 2343003; संस्करण: 2006; पृष्ठ. 247-248
55. वही; पृष्ठ. 249
56. ‘रत्नाकर’, जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 312; दोहा संख्या- 698
57. वही; पृष्ठ. 238; दोहा संख्या- 517
58. वही; पृष्ठ. 108; दोहा संख्या- 201
59. वही; पृष्ठ. 43; दोहा संख्या- 40
60. वही; पृष्ठ. 297; दोहा संख्या- 667
61. वही; पृष्ठ. 246; दोहा संख्या- 538
62. शर्मा, लोकेश चन्द्र; भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास; कृष्णा प्रकाशन मीडिया (प्रा.) लि., कृष्णा हाउस 11, शिवाजी रोड, मेरठ- 250001; संस्करण: 2017; पृष्ठ. 121
63. ‘रत्नाकर’, जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 221; दोहा संख्या- 477
64. वही; पृष्ठ. 126; दोहा संख्या- 248

65.वही; पृष्ठ. 189; दोहा संख्या- 406

66.वही; पृष्ठ. 231; दोहा संख्या- 503

67.सिंह, बच्चन; बिहारी; साहित्य अकादमी, रवीन्द्र भवन, 35, फ़िरोज़शाह मार्ग, नयी दिल्ली - 110001; संस्करण: 1982; पृष्ठ. 19

68.'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008 ; पृष्ठ. 282; दोहा संख्या- 627.

69.सिंह, बच्चन; बिहारी का नया मूल्यांकन; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 42

70.'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 310; दोहा संख्या- 693

71.किशोरीलाल; बिहारी काव्य की उपलब्धियाँ; साहित्य भवन [प्रा] लिमिटेड, के. पी. कक्कड़ रोड, इलाहाबाद; संस्करण: 1975; पृष्ठ. 168.

72.'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 281; दोहा संख्या- 623

73.दुबे, श्यामसुंदर; संस्कृति, समाज और संवेदना; ग्रंथलोक प्रकाशन; नयी दिल्ली; संस्करण: 2004; पृष्ठ. 100

74. 'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 59; दोहा संख्या- 78

75. नारायण, गुरुदेव; बिहारी: एक नव्यबोध; बालोदय प्रकाशन, 315/148, बाग महानारायण, लखनऊ; संस्करण: 1979; पृष्ठ. 50

76. 'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 307; दोहा संख्या- 687

77. वही; पृष्ठ. 62; दोहा संख्या- 88

78. प्राचीन एवं मध्यकालीन काव्य; दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक- 124001; पृष्ठ. 428

79. 'रत्नाकर', जगन्नाथदास; बिहारी - रत्नाकर; लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद- 211001; संस्करण: 2008; पृष्ठ. 105; दोहा संख्या- 194.

80. वही; पृष्ठ.107; दोहा संख्या- 200

81. वही; पृष्ठ.123; दोहा संख्या- 242

82. वही; पृष्ठ.143; दोहा संख्या- 287

83. शुक्ल, वागीश (लेख); झा, विमल (सं.); पुस्तक - वार्ता; महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा- 442001; अंक- मई- जून, 2017

84. वही; पृष्ठ. 168; दोहा संख्या- 350

85.दुबे, श्यामसुंदर; बिहारी सतसई का सांस्कृतिक अध्ययन; शब्द और शब्द, डी 118, अशोक विहार, दिल्ली- 110052; संस्करण : प्रथम; पृष्ठ. 108